चन्दामामा
फरवरी १९६३
50

डाबर
(डा. एस. के. बर्मन)
प्राइवेट लि०
कलकत्ता
लालशर
(डाबर-बालामृत)
कैल्सियम
सोडियम
जिंजर या अदरक
व
डिल या मधुरिका
का
स्निग्ध-सार
आदि पदार्थ
इस मीठी
'पुष्टई' में
बच्चों को
सुलभ हैं
खेलने-खाने की
उम्र है इनकी,
ये ही तो परिवार
और राष्ट्र के भावी
कर्णधार हैं।
इनके स्वास्थ्य और
शक्ति के लिये
डाबर का
उत्तम
बालामृत

फरवरी १९६३

विषय - सूची

★

एक प्रति ५० नये पैसे   वार्षिक चन्दा रु. ६-००

इनका भी अपना परिवार है . . .

मेट्रिक बाटों का अपना एक परिवार है और इस परिवार के मुखिया का नाम है—किलो। किलो परिवार को यह पसन्द नहीं है कि उसके सदस्यों की बराबरी या तुलना किसी और परिवार से की जाए। विशेषकर गैर-परिवार से तो बिल्कुल नहीं। मेट्रिक बाटों के गुण और महत्व को समझिये और इनका सही रूप में ही इस्तेमाल कीजिए : अन्यथा किलो परिवार बिगड़ जाएगा और आपके काम में व्यर्थ ही देर होगी। बात भी ठीक ही है—हर परिवार अपना गौरव बनाए रखना चाहता है न!

सही और सुविधाजनक लेन देन के लिए

पूर्ण अंकों में

मेट्रिक इकाइयों

फरवरी १९६२

मैं 'चन्दामामा' पिछले सात मास से पढ़ता आ रहा हूँ। मुझे सर्व प्रथम 'वेताल कथायें' सब से प्रिय लगी। इसके बाद क्रमशः 'मनु' की कहानी तथा 'कुमार सम्भव'।

वास्तव में यह 'चन्दामामा' बच्चों के लिए है फिर भी यह बड़ों के लिए भी रुचिकर तथा लाभकारी प्रतीत होता है। इति

सोहनलाल 'मदारपुरी', कानपुर

मैं "चन्दामामा" लगभग ३ साल से पढ़ता आ रहा हूँ। पहले तो मुझे इस रोचक पत्रिका का मालूम ही न था। मगर जब से मेरे एक मित्र के घर में मैंने ये पत्रिका देखी तब से सब दूसरें पत्रिकाओं को छोड़ मैं ये पत्रिका बड़े चाव से पढ़ता हूँ। इनमें कहानियाँ बहुत दिलचस्प तथा मनोरंजक होती हैं। अगर आप इश्तेहार (advertisement) में पहले तथा पीछे के सात सात पृष्ठ बेकार न करें तो आप इन चौदह पृष्ठों में बहुत कुछ दे सकते हैं। इससे पृष्ठ की संख्या में वृद्धि हो जायेगी तथा हम बालक भी खुश हो जायेंगे आखिर में मुझे यह कहना है कि मुझे "चन्दामामा" की सब कहानियाँ अच्छी लगती हैं।

सतीश मलहोत्रा, बम्बई

इस बार का दिवाली अंक जल्दी प्राप्त हो गया है। कहानियाँ तो बहुत अच्छी लगी परन्तु इसमें कहानियाँ थोड़ी और इश्तेहार ज्यादा थे।

सुरेन्द्रकुमार, नई दिल्ली

मैंने आप से कहा था कि यदि आप "संसार के आश्चर्य" के स्थान पर "संसार के आठ महान आश्चर्यों का सविस्तार वर्णन" करें तो अच्छा रहेगा।

भेड़िये का रूप, आशा का उल्लंघन तथा कुमार संभव बहुत अच्छे रहे। गुलाम लड़की भी आशा है अच्छी ही रहेगी।

विजयकुमार शर्मा, अमृतसार

नवंबर १९६२ के चन्दामामा में "भेड़िये का रूप", भारत का इतिहास अति प्रशंसनीय हैं। संसार के आश्चर्य बेकार हैं। इसके स्थान पर फिर से दास, वास की कहानी शुरू कर दें। बड़ी कृपा होगी।

कृष्ण यादवा, गुरूहरसहाये

मैं "चन्दामामा पिछले ८ वर्षों से पढ़ता चला आ रहा हूँ और प्रत्येक माह में इसकी राह दिलचस्पी से देखा करता हूँ और सदैव नई नई कहानियाँ उपन्यास और चुटकले रूपी हास्य कथायें निकाया करती हैं, जो अत्यंत अच्छी होती हैं।

राम नरेश राय, हाटा, देवरिया

मैं "चन्दामामा" नवम्बर अंक में "सर्प यज्ञ", बेताल कथायें, हनुमान की कहानी मुझे पढ़ने को मिली लेकिन इसमें चुटकले द्वारा परिहास दास वास एक बार फिर चालू करें तो मानो सोने में सुगन्ध हो गई यदि मैं इसकी जितनी ज्यादा व्याख्या करूँ उतनी ही थोड़ी चन्दामामा का पृष्ठ बढ़ादिजीये जो मुल्य होगा। मैं देने को तैयार हूँ।

जगदीशप्रसादझवर, जसवन्तगढ

"दीपावली अंक' में "सर्प यज्ञ" व "विवाह दोष" बहुत ही अच्छे लगे। इस प्रकार हम देखते हैं कि संपादन का कार्य प्रशंसनीय है।

अशोक कुमार जैन, सरधना

चन्दामामा

संपादक: चक्रपाणी

"चन्दामामा" की माँग निरन्तर बढ़ती जा रही है और हम इस स्थिति में नहीं हैं कि उस माँग को बराबर पूरी करते रहें।

चीन के दुराक्रमण के कारण तो परिस्थितियाँ और भी विकट हो गई हैं। प्रकाशन क्षेत्र में तो संकट-सा आ गया है।

कागज़ की कमी है। छपाई के खर्च भी बहुत बढ़ गये हैं। "चन्दामामा" को वर्तमान मूल्य पर देना सम्भव नहीं है। इसलिए हमने अप्रैल (६३) से चन्दामामा का दाम ६० नये पैसे करने का निश्चय किया है।

वर्ष: १४ फरवरी १९६३ अंक: ६

एशिया के पश्चिम में, अरब में, मक्का में ५७० ई. में मोहम्मद ने इस्लाम की स्थापना की। इस धर्म के कारण वहाँ के लोगों में जागरण हुआ। मोहम्मद के बाद ६३२ से खलीफाओं ने उस धर्म के अवलम्बियों का नेतृत्व किया। उन्होंने उस धर्म को ईरान से स्पेन तक व्याप्त किया।

अरबों की शुरु से भारत के पश्चिमी उत्तरी प्रान्तों पर नजर थी। ६३७ के आसपास पुलकेशी द्वितीय के शासन काल में, एक अरब सेना बम्बई के पास के थाना में आयी। फिर ब्रोच आदि प्रान्तों में उनके हमले हुए। फिर कुछ सालों बाद दक्षिणी अफगानिस्तान अरबों के वश में हो गया। फिर उन्होंने काबुल के राजा पर कई हमले किये। वह राजा कनिष्क का वंशज था।

जिन अरबों ने दक्षिण अफगानिस्तान को जीता था, उन्होंने बलोचिस्तान के कुछ भाग, सिन्धु के प्रान्त पर भी कब्जा कर लिया। ईराक के गवर्नर अल हज्जाज का दामाद था मोहम्मद इब्न कासिम, इसने कुछ देशद्रोही बौद्धमतावलम्बी और सामन्त राजाओं की सहायता से ७१२ में सिन्धु प्रान्त के कई नगरों को वश में कर लिया। सिन्धु का सारा निचला भाग अरबों ने अपने आधीन कर लिया। अरबों के पुरोगमन को दक्षिण में रोकनेवाले थे चालुक्य, पूर्व में प्रतिहार, उत्तर में कार्कोट।

९६२ में अल्पतिगीन ने गजनी राज्य की स्थापना की। वह मध्य एशिया के शासकों का गुलाम था, गजनी की स्वतन्त्र राज्य की स्थापना करने के बाद ९६३ में मर गया। ९७७ वह राज्य, उसके दामाद

सबुक्तिगीन को मिला। इसका मुकाबला करनेवाला था उद्भाण्डपुर का राजा जयपाल। ९९७ में सबुक्तिगीन मर गया। उसका लड़का मोहम्मद गज़नी का सुल्तान बना। १००१ में जयपाल मोहम्मद द्वारा पराजित हुआ। वह पराजय का अपमान न सह सका और उसने आत्महत्या कर ली।

मोहम्मद गज़नी ने फिर पंजाब जीता, स्थानेश्वर जीता। १०१५ में वह काश्मीर को जीतने के प्रयत्न में असफल रहा। १०१८ में इसने कान्यकुब्ज को तहस नहस कर दिया। प्रतिहार साम्राज्य को उसने नष्ट कर दिया। १०२२, १०२३ में ग्वालियर, कालिंजर, राज्य भी उसके वश में आ गये। १०२६ में इसने जो आक्रमण हिन्दुओं के सोमनाथ के मन्दिर पर किया, वह इतिहास में प्रसिद्ध है। इस मन्दिर के पतन के चार साल बाद मोहम्मद मर गया।

मोहम्मद संसार के प्रसिद्ध योद्धाओं में शामिल करने लायक है। इसने केवल भारतीयों से ही युद्ध न किया, तुर्कियों से भी बड़े-बड़े युद्ध किये। वह संस्कृति का भी पोषक था। पर जहाँ तक भारत के

गज़नी महमूद विजय स्तम्भ

इतिहास का सम्बन्ध है, वह अपने दुराक्रमणों के लिए ही बदनाम रहा। इसने ये आक्रमण अपने साम्राज्य को विस्तृत करने के लिए नहीं किये थे, परन्तु महज लूटने के लिए ही शायद किये थे। धर्म का प्रचार भी उसका मुख्य उद्देश्य न था। परन्तु यह स्पष्ट है कि इसके आक्रमणों के कारण हिन्दू राजाओं में आत्मविश्वास जाता रहा। १०३० में गज़नी मोहम्मद के मरने के बाद ११९२ में गूर मोहम्मद के आने तक हिन्दू

राजाओं पर उल्लेखनीय आक्रमण नहीं हुआ। एक अरब सेनापति ने बनारस पर हमला किया। परन्तु मुस्लिमों के आक्रमणों का भय भारतीयों के मन में हमेशा के लिए बन गया।

अफ़गानिस्तान के पर्वतों में घूर नाम का एक छोटा-सा राज्य है। पूर्वी फ़ारस की एक जाति इस सामन्त राज्य की शासक थी और गज़नी सुल्तान के आधीन थी। परन्तु मोहम्मद के मर जाने के बाद, गज़नी सुल्तान के कमज़ोर हो जाने पर, स्वयं बलवान होकर, वे गज़नी के सुल्तान का मुकाबला करने लगे। इस मुकाबले में गज़नी के सुल्तान बहराम शा ने घूर के दो भाइयों को जिनका नाम कुतुबुद्दीन मोहम्मद और सैफुद्दीन था मरवा दिया। इन दोनों के भाई अलाउद्दीन हुसैन ने गज़नी पर भयंकर आक्रमण किया। उसने गज़नी को ही नहीं उजाड़ा, वहाँ के लोगों का कत्ले आम सात दिन तक चलता रहा। बहराम का लड़का खुसरू पंजाब की ओर भाग गया। इसके बाद दस वर्ष तक गज़नी नगर घुज़ जाति के तुर्कों के आधीन रहा, ११७३ में वह घूर के आधीन आ गया।

अलाउद्दीन का लड़का, तुर्कियों के हाथ मारा गया, परन्तु उसके वंश के गयासुद्दीन मुबारक ने ११७३ में तुर्कों को गज़नी से भगा दिया और अपने छोटे भाई को वहाँ का सुल्तान बना दिया। इस भाई का नाम ही घूर मोहम्मद था। जब वह अपने भाई की सेना में कर्मचारी था, तभी इसने भारत पर आक्रमण करने शुरू कर दिये थे।

बालखिल्य मुनि हँसे पहले
भी फिर आया रोष—
"हम मुनियों की हँसी उड़ाना
खोकर ही तू होश!

कठिन तपस्या में कितने ही
वर्षों से थे लीन,
इसीलिये हो गयी हमारी
काया यों है क्षीण।

अरे इन्द्र, तेरी क्या हस्ती
तप का तेज कहाँ है!
भला सकेगा ही तू अब तो
तेरी वीर कहाँ है!"

बालखिल्य मुनि बहुत कुपित थे
हुए न जल्दी शांत,
लगे डालने अग्निकुण्ड में
समिधा अविश्रांत।

बैठे ही वे रहे देर तक
तन पर राख जमी,
जलते नयन धुएँ से उनके
मन में आग रमी।

कहा अन्त में यही उन्होंने—
"जन्मे ऐसा वीर,
जिसके बल के आगे भय से
काँपे इन्द्र अधीर!"

उनके इन शब्दों को सुनकर
खड़े हुए सुर-गुरु के कान,
बोले आकर कश्यप से वे—
"रखें आप सुरपति का मान!"

कश्यप बोले—"ब्रह्माजी की
बात न झूठी होगी,
बना रहेगा इन्द्र सुरक्षित
तनिक नहीं क्षति होगी!"

बालखिल्य मुनि बैठे ही थे
सहसा हुआ प्रकाश,
यज्ञकुण्ड से दिव्य पुरुष तब
निकला एक सहास।

हाथ बढ़ा कश्यप ने उनसे
ली पायस की थाल,
और उठा तब दिव्यधाम को
दिव्यपुरुष तत्काल।

पायस आधा दे कद्रू को
औ' विनता को आधा,
कश्यप बोले—"जाओ दोनों
नहीं रहे अब बाधा।"

पत्नियों से इतना कहकर
कश्यपजी हो गये रवाना,
गंधमादनगिरि पर जाकर
घोर उन्होंने तप तब ठाना।

समय हुआ पूरा, कद्रू ने
अंडे दिये हजार,
विनता ने दो अंडे, जिनका
बहुत बड़ा आकार।

कद्रू के अंडों से तत्क्षण
निकले सर्प हजार,
उनमें ही थे शेषनाग भी
जिनके माथ हजार।

पर विनता के अंडे दोनों
ज्यों के त्यों ही बने रहे,
बीत चले कितने ही दिन, पर
ज्यों के त्यों वे पड़े रहे।

दिन-पर-दिन भी गये गुजरते
किंतु नहीं वे फूटे,
विनता होती निराश प्रतिदिन
नहीं आस भी टूटे!

चमक रोज ही बढ़ती जाती
पर न फूटते हैं वे क्यों!
दुख-ज्वाला में जलती रहती
सोच-सोचकर विनता यों।

आखिर उसको गुस्सा आया
उठा एक को दे मारा,
उसी समय इक अरुणप्रभा से
चमक उठा अग-जग सारा।

देख गया यह चौंकी विनता
भय था हृदय समाता,
निकला अरुण उसी अंडे से
लँगड़ाता, बल खाता।

कहा अरुण ने—"माता, तुमने
जल्दी बड़ी दिखायी,
पटक धरा पर तुमने खुद ही
सुत की टाँग गँवायी।

बिना विचारे किया काम है
फल भी उसका भोगोगी,
सदा दूसरे की दासी बन
दुखड़े सब तो भोगोगी!"

सुत की यह सुन बात दुःख से
विनता सिसक उठी,
रोती माँ को लख सुत की भी
आँखें छलक उठीं।

बोला वह—"माँ, शोक करो मत
फल तो यह है शाप का,
दुःख तुम्हें सहना ही होगा
उसके भीषण ताप का।

अंडा एक बचा जो उससे
कुछ वर्षों के बाद,
दिव्यपुरुष निकलेगा अनुपम
रखना इसको याद।

मुक्त दासता से कर तुमको
वह ही सुखी बनायेगा,
मिट जायेंगे दुख सब सारे
जब वह जोश जगायेगा।"

इतना कहकर अरुण तुरत ही
चला गया उड़कर आकाश,
बना सूर्य का वही सारथी
वही प्रात का अरुण प्रकाश!

[१९]

[जिन व्यापारियों ने जयमल्ल और केशव को गुलाम के तौर पर खरीदा था, उन पर नरभक्षकों ने हमला किया । उस शोर शराबे में केशव और जयमल्ल एक नदी में कूदकर एक द्वीप में पहुँचे । वे वहाँ की एक झोंपड़ी के पास जा रहे थे कि उनको किसी के यह पूछने की आवाज आयी—"जीमूत कहाँ है ! कालिंग कहाँ है !" उसके बाद]

केशव और जयमल्ल को एक क्षण न सूझा कि क्या किया जाय । "यह आवाज भविष्यवक्ता मान्त्रिक की है ।" केशव ने सोचा । "और यह व्यक्ति जो प्रश्न कर रहा है, शायद नरभक्षकों का सरदार कालमुख है । झोंपड़ियों में उसके कितने साथी हैं, नहीं मालूम । अब क्या किया जाय !" जयमल्ल ने सोचा ।

यह सोचते सोचते उन्होंने एक दूसरे को इस तरह देखा, जैसे अभी अभी होश आया हो । बिना किसी बात या इशारे के दोनों एक घड़ी में जान गये कि उनको क्या करना था ।

जयमल्ल चुपचाप झुका और झोंपड़ी के पास पड़े भाले को उसने उठा लिया । फिर केशव के कन्धे पर हाथ रखकर, कान

में उसने कहा—"हमें जल्दबाजी नहीं करनी चाहिये। यह जानना है कि झोंपड़े में कितने शत्रु हैं। इस भाले से इस झोंपड़ी में एक छेद करता हूँ।" कहकर उसने नारियल के पत्तों में से सीधे भाला भोंक दिया।

केशव ने जयमल के बनाये हुए छेद में से अन्दर झुककर देखा। झोंपड़ी में अन्धेरा था। एक तरफ जलते मशाल की रोशनी में दो तीन आदमी कुछ कुछ दिखाई दिये। उनमें से एक ने गले में मनुष्यों के कंकालों की माला पहिन रखी थी। दूसरा भी कुछ वैसा ही था। पर उसके गले में कोई माला न थी। उनके एक तरफ एक युवक बैठा था, जिसके हाथ पैर बन्धे थे। उससे कंकालों की माला पहिने हुआ व्यक्ति पूछ रहा था।

"मुझे सब मालूम है। हम से तुम औरों को बचाकर नहीं जा सकोगे। बूढ़े की बात छोड़ दो। मैं केवल इन ज्येष्ठ और कनिष्ठ को ही चाहता हूँ, बताओ ये कहाँ हैं।" कंकाल पहिना हुआ आदमी फिर एक बार गरजा।

इतनी आपत्ति का समय था, फिर भी केशव बड़ा खुश हुआ। न मालूम ये दुष्ट लोग कौन हैं, पर इनको जो आदमी मिला है, जो कोई भी हो, उसका पिता नहीं है। यही नहीं, उन दोनों के लिए झोंपड़े में इन दोनों आदमियों को मारकर उस युवक को जल्द से जल्द छुड़ाना कोई बड़ी बात न थी।

केशव ने यह सोचकर जयमल की ओर मुड़कर कहा—"चलो हम अन्दर घुस जायें, केवल शत्रु दो ही हैं।"

जयमल ने केशव से कहा कि वह जल्दबाजी न करे। उसने छेद में से अन्दर

देखा। जिसके हाथ पैर बंधे हुए थे उसको देखकर जयमल्ल को लगा कहीं वह अंगविजय के सरदार गजेकान्त का आदमी तो न था। इतने में वह व्यक्ति जो बन्दी से प्रश्न कर रहा था, दान्त पीसता चिल्लाया—"चाहे इसे जितना भी सताओ, यह सच नहीं कह रहा है। इसे मन्त्रुक कषाय पिलाओ। तब सच बता देगा।"

"जो हुक्म चण्डमण्डूकेश्वरा" कहता मन्त्रुक का अनुचर उठा और झोंपड़ी के एक कोने से उसने एक पात्र उठाया। वहाँ रखे काठ के खिलौनों के सामने उन्हें तीन बार घुमाकर उसने पात्र को बन्दी के मुख के सामने रखते हुए कहा—"यह वह कषाय है, जिसे पीकर लोग सच बताते हैं। पीओ।" उसने उसके मुख में जबर्दस्ती ठूंस डाला।

"पता लगा यह नरभक्षकों का सरदार चण्डमण्डूक है। उसने बन्दी को अभी एक ऐसा कषाय पिलवाया है, जिससे वह सच बोलेगा। जल्दी ही क्या है। देखो, क्या होता है! उसके बाद उसको, उसके सेवक को यमपुरी भेज देंगे।" जयमल्ल ने कहा।

इतने में वह व्यक्ति, जिसने मन्त्रुक कषाय पिया था, जोर से खांसा। दो तीन बार इस तरह झूला, जैसे नशा आ गया हो "वे दोनों कपोत और कान्तिक कहाँ हैं....?"

उसकी बात खतम होने से पहिले ही जयमल्ल केशव के साथ उस तरफ कूदा। "केशव, खतरा है, यह सचमुच सच बुलानेवाला कषाय है। जिसने उसे पिया था, वह बता रहा है कि हम कहाँ हैं। हमें तुरत उस झोंपड़ी में घुसना होगा और उन दुष्ट को मार देना होगा।" कहता

वह झोंपड़ी के द्वार की ओर भागा। बाहर पैरों की आहट सुनाई पड़ते ही चन्द्रमण्डूक घबराया। "कोई शत्रु है, कोई शत्रु है। उसका सेवक भाला लेकर द्वार की ओर भागा।" "चन्द्रकेश्वरा! अब अदृश्य हो जाओ।"

केशव और जयमल्ल ने एक लात से झोंपड़ी के द्वार पर रखी चटाई फेंक दी और अन्दर गये। मण्डूक के सेवक ने जब उन पर हमला किया, तो उसके सिर पर उन्होंने एक चोट की। चोट खाते ही वह हाय हाय करता नीचे गिर गया।

झोंपड़ी में जब जयमल्ल और केशव घुसे तो उनको बड़ा आश्चर्य हुआ। जिसके हाथ पैर बांधे हुए थे, वह गड़ेजम्मा का सेवक ही था, जैसा जयमल्ल ने अनुमान किया था। परन्तु वहाँ चन्द्रमण्डूक का पता नहीं था। वह सचमुच अदृश्य हो गया था।

जयमल्ल ने गड़ेजम्मा के सेवक के बन्धन खोल दिये और उसको एक खम्भे के सहारे बैठा दिया। वह नशे में इधर उधर झूम रहा था। उसने उसके सिर पर पानी फेंका और उसके कन्धे हिलाते हुए पूछा—"तुम गड़ेजम्मा के सेवक मालूम होते हो! हम दोनों दोस्त हैं। हम सब झरने में एक साथ कूदे थे और एक साथ कपिलपुर के राज्य में पहुँचे थे। वहाँ तुम और तुम्हारे साथी गुलामों के व्यापारियों से बचकर मौनानन्द स्वामी के साथ यहाँ भाग गये थे। उसके बाद क्या हुआ?" उसने उत्सुकता में लगातार कई प्रश्न किये।

जयमल्ल के प्रश्नों को सुनकर जंगली लड़के ने आँखें खोलीं वह कभी जयमल्ल की ओर देखता, तो कभी केशव की ओर।

उसके मुँह पर आश्चर्य और आनन्द चमकने लगे। उसने कुछ कहने की कोशिश की, पर हकला हकलाकर रह गया।

"भाइ! तुम उस पर दबाव न डालो। उसे जरा आराम लेने दो। इस बीच हम आओ, जरा चण्डमण्डूक का पता लगावें।" केशव ने कहा।

केशव के यह कहते ही, मन्डूक का सेवक उठा—"हे, चण्डमण्डूकेश्वर! मायावी! फिर तुम्हारे दर्शन सौ वर्ष बाद ही तो होंगे। तब तक हम तुम्हारे सेवक कैसे जीयेंगे!" वह मुँह पर हाथ मारने लगा।

यह जानकर कि उसके दुख का कारण यह था, कि उसके सौ साल बाद ही दर्शन होंगे। केशव के आश्चर्य की सीमा न रही। परन्तु जयमल ने मुस्कराते हुए मन्डूक के सेवक के पास जाकर उसके बाल पकड़कर कहा—"अबे गधे, तू सोच रहा है कि हम तेरी बातों पर विश्वास करेंगे। कहाँ है! कहाँ है तुम्हारा सरदार! यदि सच न बताया तो तुम्हारे प्राण निकाल देंगे।"

"प्राण! निकालोगे! मुझे और क्या चाहिये! चण्डमण्डूकेश्वर के लिए जो मरते हैं वे सीधे स्वर्ग जाते हैं। कोई ऐसा नहीं है, जो यह न जानता हो। तुम भी कितने भोले हो। मुझे जल्दी मार दो।" कहते हुए मन्डूक के सेवक ने पास पड़े हुए भाले को लेकर जयमल को देना चाहा।

इस बार केशव के साथ जयमल भी बड़ा चकित हुआ। क्या चण्डमण्डूक सचमुच झोंपड़ी में गायब हो गया है? उसे सन्देह हुआ। इतने में गंडेअन्ना का सेवक जोर से खाँसता खड़ा हुआ। "ओह, फनिह, मुझे पहिचान लिया है न? ठीक

तुम इस दुष्ट की बातों का विश्वास न करो। मुझे पूरा विश्वास है कि मण्डूक किसी गुप्त मार्ग से अवश्य बाहर भाग गया है।

"गुप्त मार्ग.... हह हाह हाह...." मण्डूक का अनुचर घोड़े की तरह हिनहिनाया। "महामण्डूकेश्वर को क्या गुप्त मार्ग चाहिये! वह दिव्यपुरुष पानी में मछली की तरह घुस सकता है। हवा में धुँये की तरह मिल सकता है। आकाश में।"

"अरे बस चुप बन्द्। काफी बकवास कर ली तूने!" कहता जंगली युवक एक छलांग में आया और उसने उसका गला पकड़ लिया। "देखा, इस चालाक की चाल। ताकि इसका मालिक दूर भाग जाय, यह हमसे इधर उधर की बातें कर रहा है। तुम झोंपड़ी का सारा फर्श गौर से देखो। मैं इसके हाथ पैर बाँध देता हूँ, मुँह में भी कपड़े ठूँस दूँगा ताकि यह कुछ बके न!"

केशव और जयमल झोंपड़ी का फर्श ध्यान से देखने लगे। देखते देखते जंगली युवक ने अपना काम खतम कर लिया और हनुमान की तरह झोंपड़ी में उछलने कूदने लगा।

दो तीन मिनिट तक तीनों झोंपड़ी में खूब कूदे फाँदे। एकाएक जंगली युवक जोर से चिल्लाया—"गुप्त मार्ग...." और वह एक गड्ढे में गिर गया।

केशव और जयमल ने गड्ढे में झाँककर पूछा—"तुम्हें कोई चोट तो नहीं आयी है? अरे यहाँ तो सीढ़ियाँ भी हैं। तो मण्डूक यहाँ से इन सीढ़ियों पर से भूमि में गायब हुआ है।"

जंगली युवक ने धूल झाड़ते हुए कहा—"उस दुष्ट को ऊपर से यहाँ फेंकना

दो। फिर तुम भी सीढ़ियों पर से उतर आओ। मण्डूक यहीं कहीं छुपा होगा।"

केशव और जयमल ने मिलकर मण्डूक के सेवक को ऊपर से सीढ़ियों पर से गढ़े में धकेल दिया। फिर वे भी नीचे उतरे और गढ़े को उसके पास रखे लकड़ी के दरवाज़े से ढक दिया।

जैसा कि जंगली युवक ने अनुमान किया था, वह केवल सुरंग ही न थी। वहाँ बड़े बड़े कमरे थे। भयंकर भयंकर काठ के खिलौने थे। भाले तलवार आदि कितनी ही चीज़ें थीं।

"ऊपर की झोंपड़ी तो मण्डूक के कपट भरे नाटक का एक भाग ही है। उसका वास्तविक निवास गृह तो यह है। यहाँ कोने में रखी मशालों को जलाकर सब कमरे खोजो। वह ज़रूर मिलकर रहेगा।"

तुरत तीनों मशालें जलाकर, वह सारा प्रदेश छानने लगे। कहीं मण्डूक का पता न लगा।

केशव, जयमल और जंगली युवक जब सुरंग देख रहे थे, तो कपटमण्डूक अपने एक साथी को लेकर, द्वीप के मध्य के वन में एक उजड़े कुँए में से ऊपर आ रहा था।

"फिलहाल तो हम जिन्दे बाहर निकल आये हैं। उस अक्लमन्दी मान्त्रिक ने मुझे कितना धोखा दिया है। जिन्हें मुझे उसने खोजने के लिए कहा उन्हें ही मेरे घर भेजकर, मेरे प्राण लेने की कोशिश की। अब मैं उस जंगली युवक से कलाम मिलाकर, मन सुलझा रहा था, तो बाहर से ये दोनों छेद में से देख रहे थे। मैं उस अक्लमन्दी को ज़रा गुलाम बना लाऊँगा।" कहता वह दाँत पीसने लगा। (अभी है)

वरदान

विक्रमार्क ने हठ न छोड़ा, वह फिर पेड़ के पास गया। पेड़ पर से शव उतार कर, कन्धे पर डाल हमेशा की तरह मौन श्मशान की ओर चलने लगा। तब शव में स्थित बेताल ने कहा—"राजा, इस मेहनत और लगन से तुम बहुत-सी शक्तियाँ पाकर देवदत्त की तरह परोपकार कर सकते हो न! क्यों अपनी लगन और मेहनत को यों फ़ालतू करते हो! तुम्हें उस देवदत्त की कहानी सुनाता हूँ ताकि तुम्हें थकान न मालूम हो।" उसने यों कहानी सुनानी शुरु की।

एक शहर में देवदत्त नाम का एक रईस रहा करता था। जो कोई कुछ माँगता उसको देना उसकी आदत हो गई थी। गरीबों की बात तो दूर रही, अच्छे खाते पीते लोग भी देवदत्त से दान लिया करते। जितना दान देवदत्त

करता, उतना ही उसको आनन्द मिलता। इस तरह बेतहाशा दान करने से धन का पहाड़ भी पिघल जाता है। देवदत्त का सारा पैसा खतम हो गया। घर, भूमि, और जायदाद उसने बेच बाच दिये। और दान दे दिये। वह स्वयं बड़ा गरीब हो गया। वह अपनी पत्नी बालबच्चों के साथ एक झोंपड़े में रहने लगा, वह इतना गरीब हो गया था कि कभी कभी खाने के भी लाले पड़ते। इस हालत में भी यदि कोई उसके घर के सामने भूखा प्यासा खड़ा होता, तो अपना खाना उसको दे देता।

इस प्रकार जीना देवदत्त को अच्छा नहीं लगा। जीना हो तो दान करके जीना है, नहीं तो मर जाना ही उसको अच्छा लगा। इसलिए उसने अपनी पत्नी से कहा—"मैं जाकर पैसा कमाकर आता हूँ। तुम कुछ मजदूरी करके ही सही, बच्चों को थोड़ा बहुत खाने को देती रहो।" यह कहकर घर से निकल गया।

पर देवदत्त पैसा कमाना नहीं जानता था। इसलिए वह सीधा जंगल में गया। उसने एक पेड़ के नीचे अपनी जीवन लीला खतम कर देनी चाही। पर वह न जानता था कि मौत कैसे आती है। वह भूख से मर सकता था। नहीं तो कोई क्रूर जन्तु ही उसे मार सकता था। न मालूम किस रूप में मृत्यु आये, वह मृत्यु की प्रतीक्षा करता पेड़ के नीचे बैठा रहा।

यह सब पेड़ पर बैठा एक यक्ष देख आश्चर्य कर रहा था। देवदत्त को देखने से कोई तपस्या करनेवाला नहीं मालूम होता था। साधारण आदमी पेड़ के नीचे क्यों यों बैठता? यह जानने के लिए यक्ष पेड़ पर से उतरा, उसने पूछा—"कौन हो तुम, क्यों यहाँ बैठे हो?"

देवदत्त ने यक्ष को अपनी सारी कहानी सुनाई। "कितनों की ही गरीबी हटाने के लिए मैं अपना सब कुछ दे डालकर स्वयं गरीब हो गया हूँ। अब मैं जीवित नहीं रहना चाहता हूँ।" यक्ष ने देवदत्त की दानशीलता की प्रशंसा कर उसे एक पिटारी देते हुए कहा— "इस पिटारी को ले जाओ। जब कभी तुम इसमें हाथ डालोगे तुम्हें धन मिलता रहेगा। इस धन से तुम दान करते, बिना गरीबी की मुसीबतें झेले, तुम अपनी पत्नी और बाल बच्चों के साथ आराम से जीओ।" यह कहकर वह अदृश्य हो गया।

यह जान कि किसी देवता ने उसको कोई महिमाशाली पिटारी दी थी, देवदत्त बड़ा खुश हुआ। उस रुपये पैसे से जो कुछ उसको घर में चाहिए था, उसने खरीदा, हमेशा की तरह दान धर्म करता आराम से जीवन बिताने लगा। उसने जायदाद खरीदने की भी न सोची।

उस शहर में सोमसेन नाम का एक धूर्त था। वह देवदत्त के जीवन में हुए परिवर्तनों को देखता आ रहा था। सोमसेन यह न जान सका कि वह देवदत्त, जिसके पास खाने को भी न रह गया था, कैसे

दान आदि करने लगा था। यह रहस्य जानने के लिए उसने देवदत्त के घर जाकर कुछ धन माँगा। देवदत्त ने पिटारी में हाथ डालकर मुट्ठी भर सिक्के लिए और संघर्षण के हाथ में रख दिये। "हुजूर, आपने दान आदि करने के लिए जो कुछ पास था, वह सब बेच बाच दिया था फिर भी आप कैसे हर माँगनेवाले को दान कर रहे हैं!" संघर्षण ने पूछा।

"सब भगवान की कृपा है" देवदत्त ने कहा। संघर्षण ने देवदत्त का सारा घर छान डाला। उस झोंपड़ी में एक छोटे की पिटारी भी न थी, जिसमें धन रखा जा सके। आखिर चूल्हे में जलाने के लिए लकड़ी का भी पिटारी न थी। यह जानकर कि देवदत्त का रहस्य उस आश्चर्यजनक पिटारी में ही था, एक दिन रात को वह घर की दी हुई पिटारी चोरी करके ले गया।

संघर्षण की कोशिश फिजूल गई क्योंकि जब उसने उस पिटारी को घर ले जाकर खोला, तो उसमें एक कानी कौड़ी भी न थी। फिर वह ऐसी पिटारी भी न थी, जिसे चूल्हे में जलाया जा सके। उसने एक बड़ा पत्थर उस पर मारा, उस पर गढ़ा भी न हुआ। आखिर ऊबकर उसने उस पिटारी को अटारी पर रख दिया।

उसे देवदत्त पर बड़ा गुस्सा भी आया। क्योंकि देवदत्त से जब संघर्षण ने रहस्य पूछा तो उसने कहा था, यह सब भगवान की दया है। "यह रहस्य यदि मैं नहीं जान पाया हूँ, कम से कम राजा तो जान ही जायेंगे। यह सोच वह राजा के पास गया। उसने राजा से कहा "महाराज, हमारे शहर में देवदत्त नाम का एक आदमी है। दान आदि करके वह अपना

सब कुछ खो चुका है। उसको लगता है, अब कोई खजाना मिल गया है। क्योंकि वह अब पहिले की तरह सब को दान दे रहा है। क्योंकि इस तरह के खजाने कानूनी तौर पर आपके हैं, इसलिए मैं आपको यह सूचना देने आया था।"

यह सुनते ही राजा ने मन्त्री से कहा—"आप सिपाहियों को साथ ले जाकर उस देवदत्त के घर की तलाशी लीजिये और अगर वहाँ कोई खजाना आदि हो तो उसे ले आइये" आज्ञानुसार मन्त्री, सिपाहियों के साथ देवदत्त के घर गया। उसका झोंपड़ा देखते ही मन्त्री ने उसकी गरीबी का अनुमान कर लिया। फिर भी उसने देवदत्त से पूछा—"मालूम हुआ है कि तुम्हारे घर खजाना है। यदि कोई खजाना हो तो उसे तुरत राजा को सौंप दो।"

"मेरे पास कानी कौड़ी भी नहीं है। चाहिए तो आप देखलें।" देवदत्त ने कहा—"यदि तुम इतने गरीब हो, तो कैसे यों जोर शोर से दान आदि कर रहे हो?" मन्त्री ने पूछा।

"एक यक्ष ने कृपा करके मुझे एक पिटारी दी थी। जब कभी मैं उसमें हाथ रखता हूँ तो हमेशा मुझे धन मिल जाता है। मैं वही धन दान आदि कर देता था। उस पिटारी को भी कल कोई उठाकर ले गया है। आज मैं किसी को कानी कौड़ी भी नहीं दे सकता हूँ। मुझे बड़ा कष्ट हो रहा है।" देवदत्त ने मन्त्री से कहा।

मन्त्री को लगा कि देवदत्त सच ही कह रहा था, वह यह भी याद आया कि सोमदत्त वह पिटारी चुरा ले गया था, इसलिए वह सिपाहियों को लेकर सोमदत्त के घर गया। उसके घर की जब तलाशी

की, तो अटारी पर पिटारी मिल गयी। मन्त्री ने जब उससे पूछताछ की, तो आखिर मान गया कि उसने ही पिटारी चुरायी थी। पर उसने कहा कि उसमें कुछ भी न था और देवदत्त ने अपना धन कहीं और छुपा रखा था।

मन्त्री ने वह पिटारी ले ली और सिपाहियों से कहा कि वे उसे बाँधकर राजा के पास ले जायें। मन्त्री की सलाह पर राजा ने देवदत्त को बुलवाया। देवदत्त आया और उसने अपनी पिटारी को पहिचान भी लिया।

"यह सुनकर कि यह आश्चर्यजनक पिटारी है, हमने इसको मँगवाया है। इसमें तो कोई खूबी नहीं है। तुम इसका किस तरह उपयोग कर रहे हो?" राजा ने देवदत्त से पूछा। देवदत्त ने वह पिटारी ली। उसमें हाथ रखा, मुट्ठी भर सिक्के निकालकर वहाँ जो सिपाही खड़े थे उनको दे दिये।

"हमने जब हाथ रखा, तो कुछ भी न मिला। क्या इसके लिए कोई मन्त्र है?" राजा ने पूछा।

"मन्त्र कोई नहीं है महाराज, सिवाय मेरे यदि इसमें कोई और हाथ रखेगा,

तो उसे कुछ न मिलेगा।" देवदत्त ने कहा।

राजा और मन्त्री ने आपस में कुछ सलाह मशवरा किया। फिर राजा ने देवदत्त से कहा—"यह पिटारी खज़ाने से भी अधिक महत्वपूर्ण है। इसलिए तुम इसको अपने पास नहीं रख सकते। इसको दरबार में रखना होगा। क्योंकि सिवाय तुम्हारे यदि कोई हाथ डालेगा, तो धन नहीं मिलेगा, इसलिए रोज़ तुम आओ और इसमें हाथ डालकर खज़ाना भरते रहो। हम तुम्हारे लिए अच्छा वेतन निश्चित करेंगे।"

देवदत्त के सामने सिवाय मानने के और कोई चारा न था। राज-नौकरों ने हज़ारों बोरे लाकर, देवदत्त के पास रखे। राजा ने पिटारी में से धन लेकर, उन बोरों को भरने के लिए कहा। देवदत्त ने पिटारी में हाथ रखा, पर उसमें कुछ न था। पहिले कभी ऐसा न हुआ था। उसने कई बार हाथ रखकर देखा, पर पिटारी में उसे कुछ न मिला।

"तुम धोखा दे रहे हो, तुम्हें मरवाना होगा।" राजा ने देवदत्त को डराया धमकाया।

पर देवदत्त को उससे अधिक चिन्ता थी। "यदि मुझे इस पिटारी में पैसा न मिलेगा, तो मैं कैसे दान करूँगा?" वह यह सोच शोक करने लगा। मन्त्री अक्लमन्द था। यह देख कि देवदत्त में कोई छल-कपट न था, उसने देवदत्त को माफ़ करने के लिए कहा और उसको वह पिटारी देकर जाने के लिए कहा। देवदत्त जब उसको अपने घर ले गया और जब उसने उसमें हाथ डाला, तो उसका हाथ धन से भर गया। यह देख कि पिटारी की महिमा फिर वापिस आ गई थी, वह दान धर्म करता सुख से रहने लगा।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर कहा— "राजा, यक्ष की कृपा से देवदत्त को उस पिटारी में से पैसा निकालने की शक्ति मिल गई थी। परन्तु जब राजा का खज़ाना भरने का समय आया तो वह शक्ति कहाँ चली गई थी? इस प्रश्न का तुमने जान बूझकर उत्तर न दिया तो तुम्हारा सिर टुकड़े टुकड़े हो जायेगा।"

इस पर विक्रमार्क ने कहा—"वर एक बात है और शक्ति दूसरी बात है। यक्ष ने देवदत्त को कोई शक्ति न दी थी। उसने वर दिया था कि वह निर्विघ्न दान आदि करता रहे। इस भ्रम में कि उसमें धन बनाने की शक्ति थी, राजा ने उससे अपने खज़ाने भरवाने चाहे। परन्तु राजा के खज़ाने भरने का वर यक्ष ने देवदत्त को नहीं दिया था। इसलिए ही उसको पिटारी में कुछ नहीं मिला था।"

राजा का इस प्रकार मौन भंग होते ही, बेताल शव के साथ अदृश्य हो गया, और फिर पेड़ पर जा बैठा। (कल्पित)

देवता उतर आये

कृतयुग समाप्त हो चुका था, त्रेतायुग प्रारम्भ हुआ था। उन दिनों अवीक्षित नाम का एक बड़ा राजा था। उसका लड़का मरुत्त, पिता से भी अधिक प्रख्यात था। उसको दूसरा विष्णु कहा जाता था। देवेन्द्र भी मरुत्त को किसी क्षेत्र में मात न कर पाया था। इसलिए हमेशा ईर्ष्या से जला करता। इन्द्र का पुरोहित बृहस्पति, मरुत्त के यहाँ भी पौरोहित्य करके यज्ञ आदि करवाता था। बृहस्पति अंगिर का पुत्र था। अंगिर का एक और लड़का था, जिसका नाम संवर्त था। तेज में भले ही बृहस्पति अधिक हो, पर तपस्या में संवर्त ही बड़ा था। वह बृहस्पति को गंवारा न था। वह अपने भाई को सताया करता। जब संवर्त भाई के दिये हुए कष्टों से तंग आ गया, तो वह अपनी सारी सम्पत्ति छोड़कर, दिगम्बर हो तपस्या करने चला गया।

इसके बाद ही देवेन्द्र ने राक्षसों को युद्ध में जीतकर इन्द्र पद प्राप्त किया और बृहस्पति को अपना गुरु बनाया।

जब मरुत्त ने समस्त भूमण्डल को जीत लिया और सब लोकों में कीर्ति प्राप्त की, तो देवेन्द्र यह न सह सका। एक दिन उसने बृहस्पति को देव सभा में बुलाकर कहा—"मुझे यह बिलकुल पसन्द नहीं है कि तुम मरुत्त के भी पुरोहित बने रहो। मैं त्रिलोकाधिपति हूँ। मैं इन्द्रत्व प्राप्त कर चुका हूँ। यह मरुत्त मानव मात्र है। उसे कभी का मर जाना चाहिये था। इस परिस्थिति में तुम्हारा मेरा और उसका

पौरोहित्य करना बिल्कुल ठीक नहीं है। अगर अपना भला चाहते हो, तो मेरे पुरोहित बने रहो और मरुत्त का पौरोहित्य छोड़ दो।"

बृहस्पति घबरा गया, "आप यह क्या कह रहे हैं! क्या आपको छोड़कर मरुत्त का पौरोहित्य करूँगा! मरुत्त को ही छोड़ दूँगा। आप कहाँ! और वह कहाँ!" यह कहकर उसने प्रणाम भी किये।

इसके बाद मरुत्त ने बृहस्पति के पास जाकर कहा—"मैंने आपसे पहिले ही कहा था कि मैं एक यज्ञ करना चाहता हूँ। आप आकर शुभ से यह यज्ञ करवाइये। यज्ञ के लिए सब आवश्यक तैयारियाँ कर दी गई हैं।"

"अब मैं तुम्हारा पौरोहित्य नहीं कर सकता। इन्द्र ने कहा है कि मैं केवल उसका ही पौरोहित्य करूँ। मैं भी इसके लिए मान गया हूँ" बृहस्पति ने कहा।

"आपका इस तरह मुझको छोड़कर जाना ठीक नहीं है। मेरे पिता के भी आप ही पुरोहित थे।" मरुत्त ने कहा।

बृहस्पति ने साफ साफ कहा—"यह क्या बात है! उधर देवताओं का पुरोहित रहकर कैसे मैं मानव मात्र का पौरोहित्य कर सकता हूँ! मैंने कह दिया है कि मैं आज से तुम्हारा पुरोहित नहीं हूँ। तुम जिसे चाहो अपना पुरोहित बना लो। मैं तुमसे यज्ञ नहीं करवा सकता।"

मरुत्त जब यों अपमानित हो, निराश हो जा रहा था तो उसको रास्ते में नारद दिखाई दिया। "क्यों भाई, किस चिन्ता में खो जा रहे हो! कहाँ से आ रहे हो! क्या बात है! बताओ अगर मैं तुम्हारा कष्ट हटा सकता तो जरूर हटाऊँगा।" जब नारद ने स्नेहपूर्वक यह कहा तो मरुत्त ने उसे जो कुछ हुआ था, बता दिया। "मेरे

गुरु ने केवल मुझे छोड़ा ही नहीं मेरा अपमान भी किया।" कहकर मरुत्त ने अपनी कहानी समाप्त की।

"बृहस्पति यदि यज्ञ नहीं कराता है, तो क्या हो गया! उस बृहस्पति का एक भाई है जिसका नाम संवर्त है। वह बहुत शक्ति सम्पन्न है। इस समय दिगम्बर हो पर्यटन कर रहा है। वह तुमसे यज्ञ करवा सकता है।" नारद ने कहा।

मरुत्त का ढाढ़स बंधा। उसने नारद से कहा—"महात्मा! वह संवर्त कहाँ रहता है! उसके पास कैसे जाया जाये, किस प्रकार उसका अनुग्रह पाया जाय। यदि उसने भी मेरा अपमान किया, तो सिवाय मौत के और कोई रास्ता न रहेगा।"

"राजा, वह संवर्त पागल के वेष में घूम फिर रहा है। अब महेश्वर के दर्शन के लिए काशी गया हुआ है। तुम काशी जाकर नगर के द्वार पर एक शव को रखकर बैठ जाओ। संवर्त शव को देखते ही पीछे हट जायेगा। तुम उसका पीछा करो, वह जहाँ भी जाये, जाओ। जब वह अकेला हो, उसका आश्रय माँगो। जब पूछे कि तुम्हें किसने भेजा है, तो कहना कि नारद ने भेजा है। जब वह पूछे कि मैं कहाँ हूँ, तो बिना झिझके कहना कि अग्नि में हूँ।" नारद ने मरुत्त को यों सलाह दी।

मरुत्त काशी जाकर नगर के द्वार पर एक शव को रखकर बैठ गया। थोड़ी देर में संवर्त उस तरफ आया। शव को देखते ही पीछे मुड़कर भागने लगा। मरुत्त यह जानकर कि वह ही संवर्त था, उसके पीछे जाने लगा। जब दोनों एक निर्जन वन में गये, तो संवर्त ने मरुत्त पर धूल, मिट्टी, ढेले, उछालकर थूका भी। मरुत्त ने इस सब

की परवाह न की। उसको नमस्कार करके वह उसके पीछे चलता ही रहा।

थोड़ी दूर जाने के बाद, संवर्त एक बड़े पेड़ के नीचे, थकान उतारने के लिए बैठ गया। उसने फिर मरुत्त से पूछा—"तुमको कैसे मालूम कि मैं कौन हूँ! तुम्हें किसने बताया कि मैं फलानी जगह होऊँगा? तुम सच बताओ, तुम्हारी इच्छा पूरी हो जायेगी। झूठ बोलोगे तो तुम्हारे सिर के सौ टुकड़े हो जायेंगे।" मरुत्त ने जैसा कि नारद ने बताया था, वैसे ही सब कुछ बता दिया। "स्वामी, आप मेरे गुरु बनकर मुझ से यज्ञ करवाइये।" उसने अपनी इच्छा व्यक्त की।

उसने सब सुनकर—"मुझ से इस विकृत आकार में क्यों यज्ञ करवाते हो! मेरा भाई बृहस्पति यज्ञ आदि करवाने में अद्वितीय है। उसके पास जाओ।"

इस पर मरुत्त ने जो कुछ बृहस्पति को कहा था, वह भी बताया। संवर्त ने तब कहा—"मुझ से यज्ञ करवाने में क्या सुविधायें और कष्ट हैं, उनके बारे में सोच लो। बृहस्पति और इन्द्र को भी तुम पर गुस्सा आयेगा। यही नहीं यदि तुमने

मेरे कहे के अनुसार न किया, तो मैं तुम्हें नष्ट कर दूँगा।"

"स्वामी, हर हालत में आप जो कहेंगे, वही मैं करूँगा।" मरुत ने शपथ ली।

"तो जो मैं कहता हूँ, सुनो। इस यज्ञ के साथ मैं यह देखूँगा कि तुम्हें बहुत-सा धन भी मिले। मुझे न धन से काम है न दान की ही आवश्यकता है। मैं बृहस्पति और इन्द्र का अपमान करना ही चाहता हूँ। मैं तुम्हें इन्द्र के समान करूँगा।" संवर्त ने मरुत को वचन दिया।

शिव के निवासस्थल हिमालय पर्वत के पास मंजुवंत नाम का एक पर्वत है। वहाँ भरपूर सोना है। संवर्त ने मरुत को सलाह दी कि वह शिव का अनुग्रह प्राप्त करे और अपने नौकर भेजकर, वह वहाँ से सोना मंगवाले। उसकी सलाह के अनुसार मरुत ने अपने सेवकों को सोना लाने के लिए भेजा और स्वयं बड़े पैमाने पर यज्ञ की विधि पूरी करने लगा।

इसका समाचार देवलोक में बृहस्पति के पास भी पहुँचा। बृहस्पति इस चिन्ता में अस्वस्थ हो गया कि मरुत ने

बहुत-सा धन प्राप्त कर लिया है। उसका भाई संवर्त भी बड़ा धनी हो गया है। यह जानकर कि बृहस्पति बीमार था इन्द्र आया। उसने बृहस्पति से कहा—"यह क्या देह की अस्वस्थता है अथवा मन की अस्वस्थता! यह बताओ इस व्याधि के कौन कारण हैं, मैं उनको तत्काल मार दूँगा।"

"यह जानकर मैं भयभीत हूँ कि संवर्त मरुत से यज्ञ करवा रहा है। संवर्त मेरा शत्रु है। इस यज्ञ के करने पर वह बड़ा धनी हो जायेगा। मैं नहीं चाहता कि यह यज्ञ हो। यदि तुम में इस यज्ञ को रोकने की शक्ति है तो रोको।" बृहस्पति ने कहा।

तब इन्द्र ने अग्नि को बुलाकर कहा—"अग्नि, तुम मेरी तरफ़ से मरुत के पास दूत बनकर जाओ और कहो कि यह यज्ञ बृहस्पति करवायेगा। बृहस्पति के यज्ञ करवाने से उसको अमरत्व प्राप्त होगा।"

अग्नि ने जाकर जो कुछ इन्द्र ने कहा था वह मरुत को बताया तब सुनकर मरुत ने कहा—"महात्मा, यज्ञकर्ता के रूप में मेरे लिए संवर्त काफ़ी है। अगर देवताओं के याजक बृहस्पति मुझ नश्वर मनुष्य से क्यों यज्ञ करवाते हैं!"

अग्नि तब भी न माना। उसने कहा कि इन्द्र की मैत्री उसके लिए हर प्रकार से उपयोगी थी। उसने मरुत को यह लालच दिखाया कि बृहस्पति के गुरुत्व में सब लोक आसानी से मिल सकेंगे।

संवर्त ने अग्नि को रोकते हुए कहा—"तुम जिस काम पर आये थे वह हो गया है। हमें तुम्हारे बृहस्पति के पौरोहित्य की आवश्यकता नहीं है। अब तुम जाओ। नहीं गये तो मैं जलाकर भस्म कर दूँगा।"

अग्नि घबरा गया। उसने देवेन्द्र के पास जाकर कहा कि वह अपने कार्य में सफल नहीं हुआ था। देवेन्द्र ने अग्नि से कहा—"तुम फिर मरुत के पास जाओ। कह दो कि यदि उसने मेरी बात न सुनी तो उसको अपने वज्रायुध से मार दूँगा।"

अग्नि ने काँपते हुए कहा—"मुझे फिर न भेजिये। मैं गया, तो संवर्त मुझे जलाकर भस्म कर देगा।"

देवेन्द्र ने इस बात पर विश्वास न किया। "केवल तुम में ही सब को जलाकर भस्म करने की शक्ति है। तुम्हें कौन जलाकर भस्म कर सकता है!"

"यह क्या बात है! जब तुम तीनों लोकों के अधिपति हो, पर वृत्र ने, तुम से भी अधिक शक्तिशाली होकर, क्या स्वर्ग नहीं छीन लिया था!"

"मैं उस वृत्र को मच्छर की तरह मार सकता था, पर न जाने क्यों मैंने उपेक्षा की। वज्र के होते किसी मानव की इतनी हिम्मत कि वह मेरा विरोध करे!" इन्द्र ने शेखी मारी।

"यह भी देखा है। कभी तुमने च्यवन पर वज्र का प्रयोग किया था न? उस च्यवन की शक्ति से तुम्हारा वज्र तो क्या, तुम्हारा हाथ भी स्तब्ध हो गया था। यही नहीं, च्यवन ने जब एक भयंकर राक्षस को बनाकर, तुम्हारे पास भेजा, तो क्या तुमने आँखें नहीं मूँदली थीं! यह सब क्यों? मैं जानता हूँ कि उस संवर्त की कितनी शक्ति है।" उसने यों इन्द्र को सलाह बतायी। यह देख कि अग्नि उसकी बात न सुनेगा, इन्द्र ने धृतराष्ट्र नाम के गन्धर्व को अपना दूत बनाकर मरुत के पास भेजा। धृतराष्ट्र ने मरुत से कहा—"राजा, यदि तुमने इस यज्ञ के लिए बृहस्पति को

पुरोहित न बनाया, तो देवेन्द्र तुम पर वज्र का उपयोग करेगा। बाद में तुम्हारी इच्छा....."

मरुत्त ने उससे कहा—"मेरा पुरोहित संवर्त है। निस्सन्देह तुम्हारे बृहस्पति को ही शोभा देता है, यह तुम अपने देवताओं से कहना।"

"राजा, तुम आकाश में वह भयंकर कड़क सुन रहे हो! इन्द्र तुम पर वज्र का उपयोग करने के लिए तैयार है। सोच लो।" धृतराष्ट्र ने कहा।

सचमुच जो यज्ञशाला में थे, उनको भयंकर गर्जन सुनाई दिया। सब डर गये। मरुत्त का मन भी कुछ अधीर हो उठा। उसने संवर्त से कहा—"स्वामी! आप ही मुझे इस विपत्ति से बचाइये।"

संवर्त ने मरुत्त से कहा—"तुम्हें वज्र का भय बिल्कुल नहीं होना चाहिए। यही नहीं, मैं जिस तरह चाहूँगा, उस तरह यह यज्ञ चलाऊँगा।"

"तो आप ऐसा कीजिए कि वह इन्द्र और अन्य देवता प्रत्यक्ष होकर इस यज्ञ मण्डप में आयें और हमारे साथ सोम स्वीकार करें।"

"सब अभी उतरकर आयेंगे।" संवर्त ने कहा। जैसा कि उसने कहा था इन्द्र आदि देवता स्वयं यज्ञशाला में आये, मरुत्त और संवर्त ने उनका यथोचित सत्कार किया। आतिथ्य करके उनसे सोम रस पान भी करवाया। वह इन्द्र जो शेर की तरह चला था, संवर्त की महिमा के कारण भीगी बिल्ली-सा हो गया। यही नहीं उसने मरुत्त को आशीर्वाद दिया। यज्ञ के पूरा होने के बाद वह स्वर्ग चला गया।

यह देख कि उसका पति काला अक्षर भैंस बराबर था, महालक्ष्मी ने गोल मटोल भीम से अक्षराभ्यास करवाया। भीम भी शर्मिन्दा था कि ज़मीन्दार का दामाद होकर भी वह पढ़ना लिखना न जानता था। इसलिए मेहनत कर करकर पुस्तकें पढ़ने लगा था। ज़मीन्दार ने भी पढ़ाई में दामाद की सहायता की। जो कुछ कागजात उसके पास आते, पहिले जमाई से पढ़वाता, फिर स्वयं पढ़कर उन कागज़ों की बातें भीम को बताता।

भीम ने बहुत से खत वगैरह पढ़े, पर ज़मीन्दारी के मामले उसको बिल्कुल पसन्द न आये। पर इतना वह जान गया कि जो कुछ उसके ससुर पढ़ते थे, उसको ज़रूर पढ़ना था।

ज़मीन्दार हर रोज़ रात को रामायण पढ़कर, ऐनक निकालकर रामायण पर रखकर, जाकर सोया करता था। इसलिए भीम भी वैसा ही करने लगा।

जब रात हो गई और सब सो गये तो भीम नहीं सोया। वह तब तक जागता रहा, जब तक उसके ससुर रामायण पढ़ते रहे। "मैं अभी पढ़कर आता हूँ, तुम सोती रहो।" महालक्ष्मी से कहकर ससुर की ऐनक स्वयं लगाकर रामायण पढ़ने के लिए बैठ गया।

ज़मीन्दार की ऐनक बुढ़ापे की ऐनक थी। क्योंकि उसकी उम्र हो गई थी, इसलिए बिना ऐनक के वह पढ़ नहीं पाता था। भीम तो अभी नौजवान था इसलिए जब उसने वह ऐनक लगाकर पढ़ने की

कोशिश की तो उसकी आँखों से पानी बहने लगा।

इस तरह पढ़ते पढ़ते कुछ देर बाद, भीम की आँखें अपने आप मुँदने लगीं। ऊँघता ऊँघता भीम कुछ देर के लिए उठता, थोड़ी देर पढ़ता फिर उसकी आँखें मुँद जातीं। यों ऊँघते ऊँघते भीम ने रामायण में वह हिस्सा भी पढ़ा, जहाँ राम राक्षसों को मारते थे।

भीम ने ऊँघते ऊँघते आँखें खोली थीं कि कुछ आहट हुई। आँखें खोलकर जब देखा तो सामने कोई काली-सी आकृति दिखाई दी। वह कोई चोर था। वह काले कपड़े पहिनकर, मुँह और हाथों पर कोयला पोतकर अन्धेरी रात में ज़मीन्दार के घर चोरी करने आया था। पर नींद की खुमारी में, भीम को वह रामायण के राक्षस की तरह लगा। राम ने जिस प्रकार राक्षसों से पूछा था, भीम ने भी पूछा—"अरे राक्षस! तुम्हारा नाम क्या है? यहाँ क्यों आये हो?"

"चिल्लाओ मत आवाज़ निकली तो मारूँगा।" कहता चोर भीम के पास आया। वह भीम का बल नहीं जानता था।

राक्षस को देखते ही, भीम को गुस्सा आ गया। उसने चोर का वह हाथ पकड़ा जिसमें उसने छुरी पकड़ रखी थी और घूँसे से उसका गला घोंट दिया।

चोर चिल्लाता नीचे गिर पड़ा। उसका चिल्लाना सुन, सब घरवाले उठकर आ गये। चोर पकड़ा गया। क्योंकि वह चोर मशहूर था, इसलिए उसको पकड़ने पर भीम की प्रसिद्धि दूर दूर फैल गई।

(अगले मास एक और घटना)

गुलाम लड़की

[५]

उधर अलीशार ने बुढ़िया की मदद से यह मालूम कर लिया था कि उसकी बेगम कहाँ थी, पर बेवकूफ़ी से वह सो गया था। जब वह अगले दिन उठा, अपने को एक गली में देख उसे आश्चर्य हुआ। जब उसने अपना सिर टटोला, तो पगड़ी न थी।

वह उठा। बुढ़िया के पास जाकर, उसने अपनी गलती भी बतायी। उसने उसको यह जानने के लिए भेजा कि जमरूद कहाँ थी। एक घंटे बाद वह फिर से वापिस आयी। उसने कहा—"बेटा! जमरूद गायब हो गई है। मुझे विश्वास नहीं है कि वह तुम्हें फिर मिलेगी। तुम्हारी गलती के कारण ही तुम पर विपत्ति आयी है। अब केवल अल्लाह ही तुम्हारी मदद कर सकता है।"

यह सुनते ही अलीशार की आँखों के सामने अन्धेरा छा गया। वह कुछ देर ज़ोर से रोया और फिर बेहोश गिर गया। बुढ़िया की सेवा शुश्रूषा से उसको होश तो आ गया। पर मन की चिन्ता के कारण, उसको पलंग पकड़नी पड़ी। इस हालत में उसकी नीन्द भी जाती रही। यदि बुढ़िया उसकी हर तरह से देखभाल न करती, तो जल्दी ही वह मर मरा भी जाता। इस तरह साल-भर पलंग पर पड़ा रहा।

अलीशार को कुछ कुछ स्वस्थ करने के लिए बुढ़िया ने हर तरह से कोशिश

की। क्योंकि उसमें यह आशा नहीं रह गयी थी कि अमरूद उसको फिर मिलेगी इसलिए उसमें पूर्णतः स्वस्थ रहने की शक्ति भी नहीं रह गई थी। यह देख बुढ़िया ने उससे कहा—"बेटा, जब तक तुम इस पलंग पर पड़े रहोगे तब तक तुम्हें तुम्हारी प्रेयसी का दीखना असम्भव है। ठीक तरह खा खूकर स्वस्थ होकर यदि घूमोगे, फिरोगे देश में खोज खाज करोगे तो वह तुम्हें मिल सकती है।"

बुढ़िया के यह बार बार कहने पर उसको भी यह बात जँची। वह उठकर उसके साथ स्नानशाला गया। उसने उससे स्नान करवाया। शरबत पिलवाया। मुर्गी का शोरबा पिलाया। इस तरह एक महीने तक करने के बाद जहाँगीर में घूमने फिरने की ताकत आ गई। उसने बुढ़िया से विदा ली और चलता चलता उस नगर में गया, जहाँ अमरूद शासन कर रही थी।

उसी समय, उस शहर में चौथी बार दावत हुई। दावत में अमरूद अपने प्रभुओं के साथ एक तरफ बैठकर सब को गौर से देखने लगी। नागरिक हमेशा की तरह दावत के लिए बैठे हुए थे। पर जहाँ हलवा और मलाई रखे थे, वहाँ कोई न बैठा था। उसका दुष्परिणाम लोगों ने तीन बार देख ही लिया था।

जहाँगीर वहाँ आया। उसे हलवा और मलाई के सामने की जगह खाली दिखाई दी। वह वहाँ जाकर बैठ गया। आस पास के लोग उसको भय की दृष्टि से देखने लगे।

वह वहाँ बैठ ही रहा था, कि अमरूद ने उसे देखा और पहिचान लिया। तुरत उसका दिल धक धक करने लगा। कहीं ऐसा न हो कि उसके कर्मचारी उसकी

घबराहट देखकर, वह बिना कुछ किये, कुछ देर के लिए बैठ गई। उसने खलीशार को अपने सामने रखे, हलवा और मलाई को खाते देखा। उसने निश्चय कर लिया कि जब तक वह पेट भर कर खा न लेगा तब तक उसको बुलायेगी नहीं।

एक युवक का वहाँ आना और बिना किसी झिझक के वहाँ रखे हलवे और मलाई का खाना देख, औरों को आश्चर्य हुआ। क्योंकि अब तक जिस किसी ने उसको एक बार मुँह में रखा था, दूसरी बार कौर न खाया था क्योंकि सैनिक उसको पकड़कर ले जाते थे। फिर बाद में वे प्राण ही खो बैठते थे और यह युवक बिना किसी खतरे के जो कुछ खाना था, खा रहा था। जब भोजन खतम हो गया, तो वह आँखें मूँदकर प्रार्थना करने लगा।

जमरूद जान गई कि उसका भोजन खतम हो गया था। उसने सैनिकों को बुलाकर कहा—"वह जो युवक हलवा मलाई खा चुका है, उससे अदब से बात करो, मेरे साथ बात करने के लिए बुलाकर लाओ।"

जब लोगों ने सिपाहियों को हलवा, मलाई खानेवाले युवक की ओर जाते देखा, तो सोचा "तो इसके दिन भी नज़दीक आ गये हैं।" पर सैनिक उसको जैसा कि लोगों ने सोचा था, खींचकर नहीं ले जा रहे थे। वे विनयपूर्वक पूछ रहे थे। "हमारे सुल्तान आप से एक बार बात करना चाहते हैं।"

"जो हुक्म।" खलीशार उठकर उनके साथ चला गया।

यह देख लोगों न मालूम क्या क्या सोचा। "यह तो हुआ खतम" कुछ ने

कहा—"शायद न हो। इसने पेट भर हलवा जो खा लिया है।" कुछ और ने कहा—"इसे सैनिक खींचकर नहीं ले जा रहे हैं। इस पर कोई खतरा नहीं आयेगा, देखते रहो।"

अलीशार को जब जमरूद के सामने खड़ा किया गया तो जमरूद ने उससे भी वे प्रश्न किये, जो औरों से किये थे। "युवक! तुम्हारा नाम क्या है? तुम्हारा पेशा क्या है? इस नगर में, तुम क्यों आये हो?"

"मेरा नाम अलीशार है। मेरा पिता खुरासान देश में व्यापारी था। मैंने भी व्यापार किया, पर जब भाग्य ने साथ न दिया, तो मैंने व्यापार छोड़ दिया। मैं अपनी प्रेयसी को खो बैठा हूँ, उसी को खोजता खोजता इस शहर में आया हूँ। क्योंकि सिवाय उसके मेरा कोई और नहीं है इसलिए जब से वह गई है मुझे सब कुछ सपना-सा लग रहा है।" अलीशार कहता कहता, दुःख के कारण मूर्छित हो गया।

जमरूद ने उसके मुँह पर गुलाब जल छिड़कने के लिए कहा। फिर हमेशा की तरह रेत में ताम्बे की कलाई से लकीर खींची, फिर इस तरह दिखाया जैसे उसको गौर से देख रही हो, फिर अलीशार से इतनी जोर से कहा कि सब सुन लें "जो कुछ तुमने कहा है, उसमें कुछ भी झूठ नहीं है। मैं भी तुमको बता सकता हूँ कि तुम्हारी प्रेयसी तुमको अवश्य मिलेगी।"

दावत के खतम होते ही जमरूद ने अपने सैनिकों से कहा—"इनको स्नानशाला में ले जाकर नहलाओ। महल से अच्छे कपड़े लाकर इनको दो। कपड़े पहिनाकर अन्धेरा होने के बाद घोड़े पर सवार कराकर इनको अन्तःपुर लाओ।"

वह राजमहल चली गई और उस प्रतीक्षा में समय काटने लगी कि कब अन्धेरा होता है और कब उसका पति आता है। उसे एक एक क्षण एक एक युग लग रहा था। जब शाम हो गई तो वह अपने गुप्त कक्ष में गई। वहाँ जाकर उसने आज्ञा दी कि अलीशार को पेश किया जाय। कहीं ऐसा न हो कि उसको रोशनी में देख, वह अपने प्राण न छोड़ दे, इसलिए वह ऐसी जगह बैठ गई, जहाँ अधिक रोशनी न थी।

यह देख कि कहाँ से आये हुए युवक पर उनका सुल्तान इतनी तवज्जो दे रहा था, राज कर्मचारियों ने सोचा "कल तक यह युवक कोई मन्त्री या सेनापति बना दिया जायेगा।"

अलीशार ने आकर अभिनन्दन किया। जमरूद ने उससे पूछा—"स्नानशाला गये थे क्या! स्नान के बाद भूख नहीं लगी!" उसने कई प्रश्न पूछे और सब प्रश्नों का उत्तर अलीशार ने दिया। "जी हुजूर"

फिर जमरूद ने उसे भोजन करवाया भोजन के बाद उसने उसको अपने पास बिठाया। वह चकित रह गया। पर उसकी

आज्ञा के अनुसार वह बैठ गया। उसने उसका हाथ पकड़कर पास खींचा।

अलीशार के मुँह पर आश्चर्य देख अमजद हँसी न रोक सकी। उसने ज़ोर से हँसकर कहा—"क्यों, तुमने अभी अपने गुलाम को नहीं पहिचाना है अलीशार!"

जब तक उसने यह बात न सुनी, उसने अमजद के मुँह को ग़ौर से नहीं देखा। उसको पहिचानने पर उसको जो आनन्द हुआ, वह वर्णनातीत है। इतने दिन बाद, उसकी खोज कामयाब हुई थी।

अगले दिन सवेरा होते ही, अमजद ने राजोचित वस्त्र पहिने और अपने कर्मचारियों को राजमहल के आँगन में उपस्थित होने के लिए कहा। सबके उपस्थित होने पर उसने कहा—"आज से मैं यह राज्य छोड़ रहा हूँ। इसलिए, आप फिर नगर द्वार के पास जाकर एक और राजा को चुन लीजिये। आज से मेरा जीवन इस युवक के जीवन से बँध गया है। मैं इसके देश जा रहा हूँ। अल्लाह तुम्हारी रक्षा करेंगे।"

नगरवासियों ने अपने सुल्तान को ज़ोरदार विदाई दी। सन्दूकों में पोशाकें, धन, आभूषण आदि दिये। खाना-दाना भी तैयार करके दिया। सन्दूकों को ऊँटों पर लदवा दिया। दो अच्छे ऊँटों पर मखमल बिछाकर अमजद और अलीशार को बिठाया।

वे सब साथ लेकर अलीशार अपने नगर आया। उसने ग़रीब फ़कीरों को दान दिया। बहुत-सा धन उसके पास था ही, इसलिए, अमजद और अलीशार कई साल तक आराम से रहे। उनके बहुत से बाल-बच्चे भी हुए। (समाप्त)

तोता बुद्धि

बाबा ने बड़े लड़के को बुलाया, उसको दो आने देते हुए कहा—"ज़रा जल्दी जाकर मेरे लिए नास लेते आओ।" यह देख कि बड़ा दुकान की ओर जा रहा था, दादी ने कहा—"ज़रा एक नारियल भी लेते आना। भगवान पर चढ़ाना है।" इतने में उसके पिता ने बुलाकर कहा—"मेरी दवात खाली हो गई है। नई दवात लेते आना।" उसने उसके हाथ में एक रुपया रखा। पन्द्रह मिनट बाद बड़ा लड़का एक दवात ले आया। वह नारियल और नास बिल्कुल भूल गया। वह फिर जाकर उन्हें ले तो आया। पर फिर भी उसके इस काम को याद करके बच्चे दिन-भर हँसते रहे।

"अरे बड़ों में तोता बुद्धि होती है उनको कुछ शब्द तो याद रहते हैं पर उनके अर्थ नहीं आते। जब एक बात के बाद दूसरी बात सुनते हैं, तो पहिली बात भूल जाते हैं। जो अन्त में सुनते हैं, वह ही याद रहता है। इस तरह का ही आदमी कभी पुराने ज़माने में रहा करता था।" यह कहते कहते बाबा ने अपनी सुंघनी निकाली।

"कहानी कहानी, बड़े लड़के की तरह ही न? उसने क्या किया था बाबा!" बच्चों ने प्रश्नों की वर्षा की। बाबा ने सुंघनी लेकर आराम से कहना शुरू किया।

एक दिन उसकी दादी ने उससे कहा—"शास्त्री के पास जाकर यह तो मालूम करो कि अमावास कब आती है।"

वह दादी के घर गया। दादी अपने पोते की बात जानती थी, इसलिए उसने उससे कहा—"अरे, जो मैं कहूँगी, तुम भूल जाओगे, इसलिए मैं जो कहूँ, उसे कहते कहते जाना।"

वह शास्त्री के पास गया। "अभी कहाँ! आज पूर्णिमा है। पन्द्रह दिन तक नहीं आयेगी।" शास्त्री ने कहा।

पोते ने कहा—"अभी कहाँ! पन्द्रह दिन तक नहीं। अभी कहाँ! पन्द्रह दिन तक नहीं।" जोर से चिल्लाता घर की ओर गया।

रास्ते में नहर के किनारे एक आदमी मछलियों के लिए जाल डाले हुए था। जब बहुत देर तक उसे मछली न मिली, तो उसने ऊबकर कहा—"कब मिलेंगी मछलियाँ और कब मैं घर जाऊँगा!"

ठीक उसी समय वह लड़का भी "अभी कहाँ! अभी पन्द्रह दिन बाकी हैं।" चिल्लाता उस तरफ आया।

जिसने जाल लगा रखा था, वह उबल पड़ा। "कौन है यह! गाड़ दो इसे!" उसने गुस्से में कहा।

यह सुनते ही वह लड़का शास्त्री की बात भूल गया। "कौन है वह! गाड़ दो इसे" ये बातें दुहराता घर के पास आया।

उसी घर में एक रोगी था। उसके चारों ओर बन्धु दुखी बैठे थे। उनमें से कई इसकी बातें सुनकर इसको मारने के लिए लपके। पर कई और ने उन्हें रोककर कहा—"ठहरो जी, उसे बातें मैं तो बकने दो।"

यह लड़का पुरानी बातें भूल गया और नयी बातें बड़बड़ाने लगा। "ठहरो जी, उसे बातें मैं बकने दो" कहता कहता वह वहाँ से चला। वह जल्दी ही एक ऐसी जगह पहुँचा जहाँ एक घर जल रहा था। जलते हुए घर को बुझाने के लिए कुछ कोशिश कर रहे थे। इस लड़के ने आराम से खड़े होकर कहा—"ठहरो! बातें मैं बकने दो।"

"कौन है वह! सिर पर घड़ा भर पानी उंडेल दो और लाठी से खूब मरम्मत कर दो।" किसी ने कहा।

"घड़ा भर पानी डालकर लाठी से मरम्मत करो। गुनगुनाता, बुढ़िया का पोता वहाँ से भागा। वह अब भी चिल्लाता जा

रहा था, तो एक कुम्हार ने सोचा कि वह उसको सलाह दे रहा था। उसने उससे कहा—"तुम अपने रास्ते जाओ।"

"तुम अपने रास्ते जाओ" कहता कहता वह अपने घर पहुँचा।

"कहाँ रहे इतनी देर! शास्त्री ने क्या कहा था?" उसकी दादी ने पूछा।

"तुम अपने रास्ते जाओ—उन्होंने कहा था" पोते ने जवाब दिया।

"ओहो" तू छोटा लड़का है। इसलिए यों कहा होगा। तुम जाकर उनसे कहो कि मेरे लिए तुम पूछ रहे थे। जाकर पूछो कि कब आयेगी।" बुढ़िया ने कहा।

वह फिर शास्त्री के घर गया। "मैं अपनी दादी के लिए पूछ रहा हूँ। वह है—हाँ, वह है न कब आयेगी?"

यह सोच कि वह अपनी दादी के श्राद्ध के बारे में पूछ रहा था। शास्त्री ने पूछा—"वे कब गुजर गई थीं? अमावस्या से पहिले कि बाद में?"

"हाँ, हाँ, वही, अमावस्या,—"लड़के ने कहा। तब तक उसको वह शब्द ही याद न आया था।

"अमावस्या के दिन ही गुजर गई थीं, तो मैं उस दिन तुम्हारे घर आ जाऊँगा। तुम्हारा घर कहाँ है?" शास्त्री ने पूछा।

पोता उसको घर की निशानियाँ बताकर घर चला आया। "अमावस्या के दिन शास्त्री घर आयेंगे।" उसने अपनी दादी से यह कहा। पर बिचारी बुढ़िया यह न जान सकी कि कब अमावस्या आती थी। इसलिए वह शास्त्री के घर स्वयं गई और उनसे मालूम किया कि कब अमावस्या आती थी।

बावला

एक गाँव में विधवा के एक लड़का था।

परन्तु वह बावला था। उसको पहाड़े भी न आते थे। दुकान में जाता, तो वह इतनी भी गणित न जानता था कि दुकानदार की दी हुई चीज़ गिन सके। यह जान दुकानदार उसको ठगा करते।

चूँकि उसका लड़का बावला था, इसलिए उसकी माँ उसका खूब ख्याल करती, तीन बार उसे दिन में खाना खिलाती। प्रेम से देखा करती। परन्तु वह ही अपनी मूर्खता पर अक्सर चिन्तित रहता।

"यदि मुझ में कुछ अधिक बुद्धि होती, तो क्या होता। क्योंकि मुझ में अक्ल नहीं है, इसलिए मैं तुम्हारी मदद नहीं कर सकता। मेरे गुज़ारे का भार भी तुम्हें ढोना पड़ रहा है।" लड़का कहा करता।

"बेटा! क्या सभी अक्लमन्द होते हैं! भले ही भगवान ने तुम्हें बुद्धि न दी हो, पर तुम्हें अच्छाई तो दी है और दो के बराबर ताकत तो दी है। जो मेहनत तुम कर सकते हो, क्या कोई और कर सकेगा?" कहकर उसे समझाया करती।

परन्तु उसे ये बातें पसन्द न आतीं। "तो फिर मैं कैसे अक्लमन्द बनूँगी?" वह माता से समय समय पर पूछा करता।

आखिर उसकी माँ ने तंग आकर कहा— "जो टीले पर मन्त्रोंवाली बैठी है, उससे कुछ अक्ल माँग लाओ।"

वह लड़का माँ की बात का विश्वास कर, भागा भागा उस स्त्री के पास गया। वह चूल्हे के पास बैठी खाना बना रही थी।

"माँ, मुझे क्या थोड़ी अक्ल उधार देगी! मैं बिल्कुल बेअक्ल हूँ। माँ की मदद नहीं कर पा रहा हूँ। मेरी माँ ने बताया है कि तुम बेअक्लों को अक्ल दे सकती हो!" बावले ने कहा।

बी ने उसकी ओर गौर से देखा। "जो चीज़ तुमको सबसे अच्छी लगती हो, उसे ले आओ, फिर मैं तुम्हारी बुद्धि के बारे में सोचूँगी।"

बावले ने घर जाकर माँ से जो कुछ बी ने कहा था, कहकर पूछा—"माँ, मुझे सबसे अच्छा क्या लगता है?"

"मुरगी का माँस। कल एक मुरगी ले जाकर, बी से अक्ल ले आना।" माँ ने कहा।

अगले दिन वह एक मुरगी लेकर, बी के पास गया। "जो चीज़ मुझे सबसे अच्छी लगती है, मैं वह लाया हूँ।"

"यह देखना है कि यह बात ठीक है कि नहीं! इस प्रश्न का उत्तर दो.... बिना पैरों के क्या चीज़ भागती है।" मन्त्रोंवाली बी ने बावले से पूछा। काफ़ी देर तक सिर खुजलाने के बाद उसने कहा कि वह न जानता था।

"तो मानो तुम ऐसी चीज़ नहीं लाये, जो तुम्हें सबसे अधिक पसन्द थी। जाकर फिर कोई और चीज़ लाओ। इस बार तुम ऐसी चीज़ लाना जो तुम्हें सबसे अधिक पसन्द है।" बी ने कहा।

जब वह घर पहुँचा, तो उसकी माँ पलंग पर बीमार थी। बहुत से लोग चिकित्सा कर रहे थे। जब पूछा गया तो बताया गया कि एकाएक उसे पक्षाघात हो गया था। चिकित्सा से कोई फ़ायदा नहीं हुआ था। उसने अपने लड़के को

पास बुलाकर कहा—"बेटा, अब मैं जिन्दा नहीं रहूँगी। मन्नोंवाली जी ने तुम्हें बुद्धि दी है न! यदि मैं भी न रही, तो भी तुम अपना जीवन निर्वाह कर सकोगे। मैं अब निश्चिन्त हो प्राण छोड़ दूँगी।" कहकर उसने आँखें बन्द कर लीं।

वह रात-भर अपनी माँ के लिए लगातार रोता रहा। "बिना माँ के कैसे जीऊँ! अब मेरी देखभाल कौन करेगा! मेरी जरूरतें कौन पूरी करेगा! इस तरह सोचने में उसे एक बात मालूम हुई—संसार में माता से अधिक कोई और चीज प्रिय न थी।

इसलिए वह माता के शव को एक बोरे में डालकर, मन्नोंवाली जी के पास ले गया। "मैं सबसे अधिक प्रिय चीज लाया हूँ। मुझे बुद्धि दो।"

"यह बात सच है कि नहीं, मालूम करना है। इस प्रश्न का जवाब दो, ऐसी कौन-सी चीज है, जो सोना नहीं है, पर सोने के समान चमकती है।" जी ने बावले से पूछा।

बावले ने बहुत देर तक सोचने के बाद कहा कि मुझे मालूम नहीं है। "तो फिर एक बार आते समय, जो चीज सबसे अधिक प्यारी हो, वह लेते आना।"

बावला माँ के बोरे को लेकर घर की ओर चला। परन्तु रास्ते में ही वह एक जगह औंधा गिरकर, अपनी दुस्थिति के बारे में सोचकर रोने लगा।

"क्यों रो रहे हो!" किसी को यह कहता सुन, उसने सिर उठाकर जो देखा, तो राधा नाम की लड़की दिखाई दी। उसने कहा कि माँ के गुजर जाने के बाद वह असहाय स्थिति में था, बुद्धि देनेवाली मन्नोंवाली जी ने जो उससे

प्रश्न किये थे, वह उनका उत्तर न दे पाया था।

इन प्रश्नों को सुनकर राधा ने हँसकर कहा—"बिना पैरों के भागनेवाली है नदी, सोने से अधिक चमकता है सूर्य। यह भी नहीं जानते। तुम जैसे की देखभाल किसी न किसी को करनी होगी। मैं तुम्हारी देखभाल करूँगी। सुना है कि बेवकूफ अपनी पत्नियों की देखभाल अच्छा करते हैं। क्या मुझसे शादी करोगे?"

"यदि, तुम्हें कोई आपत्ति नहीं हो, तो मुझे शादी करना मंजूर है।" बावले ने कहा। उन दोनों ने शादी कर ली। राधा उसकी माँ से भी अच्छी तरह देखभाल करने लगी। वह भी राधा जो कहती वह अवश्य करता। दोनों की जोड़ी अच्छी थी।

एक दिन अचानक बावला जान गया, कि उसको सबसे अधिक प्रिय पत्नी थी। इसलिए वह राधा को लेकर मन्त्रोंवाली स्त्री के पास गया—"इस बार मैं सबसे अधिक प्रिय चीज लाया हूँ। मुझे बुद्धि दो।"

"हाँ, तो बताओ कि ऐसी कौन-सी चीज है, पैदा होने के समय जिसके दो पैर थे। फिर जिसके चार पैर हो जाते हैं?" स्त्री ने पूछा।

बावले को सिर खुजाते देखा, राधा ने उसके कान में कहा—"मेंढक" फिर उसने ज़ोर से कहा—"मेंढक।"

"कोई बात नहीं, तुम तो बावले हो। तुम्हारी पत्नी अच्छी अक्लवाली है। तुम दोनों आपस में बुद्धि बाँटकर आराम से रहो।" कहकर मन्त्रोंवाली स्त्री ने उनको भेज दिया।

उस मायावी मृग को देखते ही राम को भी सीता की तरह भ्रम हुआ। उन्होंने लक्ष्मण से कहा—"तुम, जटायु और सीता को देखो और मैं इस हरिण को पकड़कर लाता हूँ।" वे तलवार, धनुष और बाण लेकर हरिण को पकड़कर लाने के लिए गये।

मारीच ने, जो काम उसे सौंप गया था, उसे आरम्भ किया। वह हरिण के रूप में ही दिखाई देता रहा, कभी पास आता, कभी भगाता भगाता वह राम को आश्रम से काफ़ी दूर ले जाता। जब राम को लगा कि वह जीवित नहीं पकड़ा जा सकता था, तो उन्होंने उसपर बाण छोड़ा।

मारीच ने झट हरिण का रूप छोड़ दिया। राक्षस के रूप में गिरते हुए राम की आवाज़ में वह चिल्लाया—"हाय.... सीता लक्ष्मण...."

उसका यह चिल्लाना राम को अशुभ-सा लगा। वह हरिण क्या मारीच ही था। ज्योंहि यह सन्देह उनके मन में आया, वे जल्दी-जल्दी पर्णशाला की ओर चलने लगे।

"लक्ष्मण! यह तुम्हारे भाई की आवाज़ मालूम होती है। मुझे डर लग रहा है,

तुम तुरत जाकर राम की रक्षा करो।" सीता ने कहा।

सीता के बहुत मनाने पर भी लक्ष्मण न माना। उसने कहा—"देवताओं, मनुष्य, गन्धर्वों और राक्षसों में कोई ऐसा नहीं है, जो भाई को हरा सके। यह किसी राक्षस की माया है। भाई ने मुझे तुम्हारे पास रहने के लिए कहा है। मैं नहीं जाऊँगा...."

"जब वे आपत्ति में हैं, तब भी तुम नहीं जा रहे हो, क्या तुम उनके मित्र हो या शत्रु? मुझे लगता है, राम को मरने दोगे! राम पर यदि आपत्ति आयी, तो मैं तुरत मर जाऊँगी। तू मेरी रक्षा क्या करेगा!" सीता ने कहा।

लक्ष्मण ने तरह तरह से सीता का भय और सन्देह हटाना चाहा। पर वह सफल न हुआ। सीता ने उसको खरी खरी सुनाईं—"तुम क्यों राम के पीछे पीछे आये? अपने लिए? या भरत के लिए? स्वप्न में भी न सोचना कि मैं तुम्हें या भरत को मिलूँगी!"

आखिर लक्ष्मण ने खिझ कर कहा—"ऊटपटांग बातें करना स्त्रियों के लिए स्वाभाविक है। तुमने मुझे इतनी भारी बातें कही हैं, तुम्हारा बुरा अवश्य होगा। मेरे चले जाने के बाद बस, देवता ही तुम्हारी मदद कर सकते हैं।" यह कहकर वह गुस्से में गुनगुनाता निकल पड़ा।

लक्ष्मण उधर गया ही था कि रावण सन्यासी के वेष में सीता के, जो अकेली बैठी थी, पास आया। उसने पतला गेरुआ पहिन रखा था, छाता लेकर, खड़ाऊँ पहिन कर, कमण्डल लेकर, वेदों का पाठ करता आया, उसने सीता को लगातार आँसू बहाते गौर से देखा। उन्होंने रेशमी साड़ी पहिन रखी थी। उनके अंग अंग में

सौन्दर्य निखर रहा था। उनके गले में मणियों की मालायें चमक रही थीं।

रावण ने सीता को सम्बोधित करके, कहा—"तुम कौन हो? क्या पार्वती हो? अप्सरा हो? या लक्ष्मी हो? मानवों, देवों और यक्षों में मैंने तुम-सा सुन्दर कहीं नहीं देखा है। इतनी कोमल हो, सुन्दर हो, छोटी हो....राक्षसों के इस प्रदेश में तुम क्या कर रही हो? क्यों अकेली हो? क्या सोच रही हो?"

सीता ने रावण को सचमुच सन्यासी समझकर आचमन आदि के लिए पानी देकर, अतिथि सत्कार करके आसन बिछा कर, निमन्त्रण दिया—"आइये, भोजन तैयार है।" उन्होंने उस सन्यासी के प्रश्नों का उत्तर देते हुए बताया कि बारह वर्ष गृहस्थी चलाने के बाद, कैसे उनके श्वसुर ने उनके पति का पट्टाभिषेक करने की सोची कैसे कैकेयी ने उनका यह प्रयत्न भंग किया और कैसे उनको वनवास करना पड़ रहा है आदि आदि। सब बताने के बाद उन्होंने रावण से पूछा—"आपका नाम क्या है? गोत्र क्या है? आप दण्डकारण्य में क्यों अकेले अकेले फिर रहे हैं?"

सीता के इन शब्दों के कहते ही रावण ने कहा—"मैं राक्षसों का राजा रावण हूँ। मेरी कितनी ही पत्नियाँ हैं, पर एक भी सीता के समान नहीं है। मैं जिस नगर लंका में रहता हूँ, वह समुद्र के बीच एक ऊँचे पर्वत पर है। यह जगह छोड़कर मेरे साथ चली आओ। बाग-बगीचों में हम दोनों घूमेंगे फिरेंगे। मैं तुम्हारे लिए पाँच हजार दासियों को नियुक्त करूँगा।"

यह सुन सीता का भयभीत होना तो अलग, वह क्रुद्ध हुई। रावण को डाँटा और समझाया। राम के पराक्रम के बारे में कहा। सब सुनने के बाद रावण ने अपने पराक्रम के बारे में कहा—"मैं कुबेर का भाई हूँ। कुबेर का पुष्पक विमान मैंने ले रखा है। मेरा नाम लेते ही सब देवता डरते हैं। राम क्योंकि कमजोर है, इसलिए ही राज्य छोड़कर जंगलों में मारा मारा फिर रहा है। शायद तुम राम के डर से मेरे साथ आने के लिए हिचक रही हो। यदि मेरे साथ रही, तो राम तुम्हारा कुछ नहीं बिगाड़ सकता। वह मेरे नाखून के भी बराबर नहीं है।"

"एक तरफ कह रहे हो कि तुम कुबेर के भाई हो और फिर इस तरह की बातें क्यों कर रहे हो! यदि तुम में पर-स्त्री की कामना रही तो तुम और तुम्हारे राक्षस वंश का अवश्य नाश होगा।"

रावण गरमाया, हाथ फैला कर अपने वास्तविक रूप में सीता के सामने प्रत्यक्ष हुआ। उसकी आँखें अंगारे हो रही थीं, शरीर बिल्कुल काला था। उसने सीता से कहा—"अरी पगली, तुम्हें मुझसे अच्छा प्रसिद्ध पति कहाँ मिलेगा! आज मुझे इनकार करके बाद में पछताओगी!" रावण ने

सीता को पकड़ लिया। वह एक हाथ से सीता की चोटी और दूसरे से उनकी टाँगें पकड़कर आकाश में उड़ा। सीता छटपटाईं, उन्होंने राम को आवाज दी। लक्ष्मण को पुकारा। "राम से कहना कि रावण सीता को उड़ा ले गया है।" उन्होंने पेड़ों से कहा।

इतने में एक पेड़ पर सीता को जटायु दिखाई दिया। सीता ने जटायु से कहा— "जटायु, यह राक्षस मुझे जबर्दस्ती उड़ा ले जा रहा है। यह बात राम से कहना।"

जटायु जो पेड़ पर बैठा बैठा ऊँघ रहा था, एकाएक उठा। आँखें खोलकर, रावण को देखकर उसने कहा—"रावण, तुम बहुत गलत काम कर रहे हो। साधारण लोग, जिस तरह अपनी पत्नियों की दूसरों से रक्षा करते हैं, उसी तरह राजा को दूसरों की पत्नियों की रक्षा करनी चाहिए। मैं बूढ़ा हूँ। सात्विक हूँ। निरायुध हूँ। तुम युवक हो। तुम्हारे पास शस्त्र हैं। फिर भी, मैं तुम्हें सीता को नहीं ले जाने दूँगा। राम लक्ष्मण को दूर गया हुआ देखकर तुम कायरों की तरह सीता को उठाकर ले जा रहे हो।"

यह कहता जटायु, रावण से भिड़ पड़ा। रावण जटायु से रथ पर बैठा-बैठा, धनुष बाण लेकर लड़ने लगा। बलवान जटायु, नाखूनों से, पैरों से, चोंच से रावण का कवच उखाड़ने लगा। उसके शरीर को खरोंचा। उसके बाणों को तोड़ दिया। रथ के गधों को और सारथी को भी मार दिया। आखिर उसने रथ को ही तोड़ दिया।
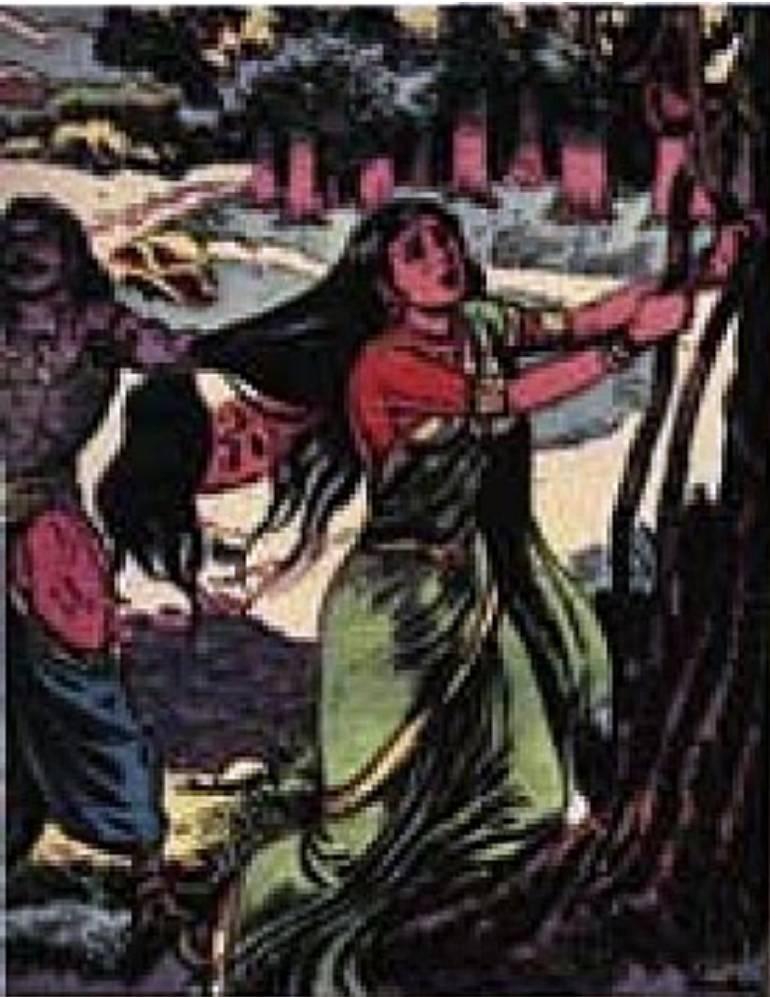
रावण रथ से उतर पड़ा, सीता को बगल में रखकर भूमि पर उतर आया। इतने में जटायु थक गया। यह देख, रावण सीता के साथ फिर आकाश में उड़ चला। परन्तु जटायु ने आकर रावण का रास्ता रोका। उसने रावण से कहा—"छी, छी, तुम चोर हो! तुम डरपोक हो। अगर तुम वीर हो, तो राम और लक्ष्मण के आने तक यहीं रहो। उनसे युद्ध करो।"

रावण ने न सुना, वह आगे चला गया। जटायु ने रावण की पीठ पर खरोंचा। रावण के बाल उसने नोंचे। रावण को गुस्सा आ गया। उसने सीता को नीचे उतार दिया और जटायु से भिड़ पड़ा। दोनों में युद्ध हुआ। आखिर रावण ने तलवार निकाल कर जटायु के पंख और पैर काट दिये। जटायु अध मरा-सा हो, नीचे गिर गया। सीता भी रोती रोती जटायु की ओर भागी। जटायु का आलिंगन करके वह चिल्लाई—"राम और लक्ष्मण कम से कम अब तो आकर मेरी रक्षा करो।" रावण को अपनी ओर आता देख, सीता पेड़ों को पकड़कर तड़पने लगी। "बस करो" रावण चिल्लाया। उसके बाल पकड़ कर, उसको गोदी में बिठाकर आकाश में उड़ने लगा।

रावण जब बहुत तेज़ी से जाने लगा, तो सीता के कुछ आभूषण नीचे गिर गये। सीता ने रावण का अपमान किया, कहा—"तुम डरपोक हो, चोर हो।" अगर अब भी तुमने मुझे छोड़ दिया, राम तुम्हें माफ़ कर देंगे। तुम जो सोचकर मुझे यहाँ से ले जा रहे हो, वह नहीं होगा। क्योंकि राम को छोड़कर मैं बहुत दिन नहीं जीऊँगी।" रावण ने उसकी बातों की परवाह नहीं की।

आकाश में जाते हुए सीता को एक पहाड़ की चोटी पर पाँच छः बन्दर दिखाई दिये। "शायद तुम ही मेरी खबर राम तक पहुँचाओगे।" यह सोचकर, सीता ने एक कपड़े में अपने आभूषण रखकर, उन बन्दरों के बीच में छोड़ दिये। रावण ने यह न देखा। पर वानर सीता को बहुत देर तक लगातार देखते रहे।

रावण झील पार करके, समुद्र तक पहुँचा। उसे भी पार करके सीता के साथ लंका में पहुँचा।

लंकापुरी बहुत ही सुन्दर नगरी थी। वहाँ के राजमार्ग लम्बे-लम्बे और चौड़े चौड़े थे। रावण के अन्तःपुर के सात प्राकार थे। उन सबको पार करता, वह सीता को अन्दर ले गया। उसने वहाँ भयंकर मुखों वाली राक्षसियों को बुलाकर कहा—"बिना मेरी अनुमति के न कोई पुरुष, न कोई स्त्री ही इस सीता को देख पाये। मोतियाँ, रत्न, सोना और कपड़े यदि ये माँगें, तो मेरे बिना पूछे ही इनको दे दो। यदि किसी ने इनसे कोई ऐसी बात कही, जिससे इनका मन दुखेगा, तो मैं तुरत उसके प्राण निकलवा दूँगा।"

१. श्रीकृष्ण यादव, दिल्ली

क्या आप "भारत के इतिहास" में वर्तमान चीन के हमले का ब्योरा देंगे?

हाँ, अवश्य।

आप ऐसे संकट के समय वीर पुरुषों से सम्बन्धित कहानियाँ नहीं छापते?

छापते हैं, पर इनके लिए अलग शीर्षक नहीं देते।

२. प्रियंकर बनर्जी, जयपुर

महान व्यक्तियों के विचारों को आप "चन्दामामा" में क्यों नहीं स्थान देते?

यदि वे कहानी रूप में होंगे, तो स्थान देने का प्रयत्न करेंगे।

३. सुमेरमल जैन, मद्रास

क्या आपका छोटा पेनफ्रेन्ड कोई भी बन सकता है?

आप इस विषय में, व्यवस्थापक "चन्दामामा" से पत्र व्यवहार कीजिये।

४. खेलसिंह पंजाबी रंगीला, बिलासपुर

आप "चन्दामामा" में पत्र मैत्री स्तम्भ कब से चालू कर रहे हैं?

निकट भविष्य में तो कोई विचार नहीं है।

५. पी. कासुलनाथ, हसनापुरा

आप अपना फोटो चन्दामामा में प्रकाशित क्यों नहीं करते?

ज़रा शर्मीला हूँ। फिर मैं विज्ञापन लायक आदमी भी नहीं हूँ।

६. भगवती देवी, चौरसिया

चीन और भारत के बारे में क्या "चन्दामामा" में कुछ भी न छपेगा?

छपा था—आपने हमारी [illegible] रक्षा के लिए क्या किया!

७. आलोक भट्टाचार्य, कानपुर

अरण्यकाण्ड के समाप्त होने के पश्चात् क्या आप महाभारत की भी कहानियाँ छापेंगे?

हम महाभारत का ही प्रकाशन करते आये हैं, अब भी "अन्तिम पृष्ठ" में, आप महाभारत की कहानी पढ़ सकते हैं।

८. एस. नागराज, वाराणसी

आप प्रति मास चन्दामामा कितनी प्रति प्रकाशित करते हैं?

चन्दामामा (हिन्दी) की ५१ हजार प्रतियाँ प्रति मास छपती हैं।

९. दिलीप परीख, बम्बई

हर महीने करीब कितने लोग फोटो परिचयोक्ति प्रतियोगिता में भाग लेते हैं?

हजारों, हमने करीब करीब गिनना छोड़ दिया है।

१०. प्रेमरतन जैन, मद्रास

क्या आप "भयंकर घाटी" नामक कहानी पुस्तक रूप में प्रकाशित कर सकते हैं?

अभी तो "चन्दामामा" में ही धारावाहिक रूप में छप रही है, इसके बाद ही पुस्तकाकार में प्रकाशित करने की सोच सकते हैं।

११. पराशर तिवारी, गोरखपुर

क्या आपने "चन्दामामा" में "पाठकों के मत" नामक स्तम्भ निकालना बन्द कर दिया है?

बन्द तो नहीं किया है, हाँ कभी कभी अन्य सामग्री की अधिकता के कारण रह रह जाता है।

Photo by P. R. Shinde

पुरस्कृत परिचयोक्ति

बैठे हो किस चिन्ता में ?

प्रेषक : राजकुमार श्रीवास्तव-कानपुर

Photo by P. R. Shinde
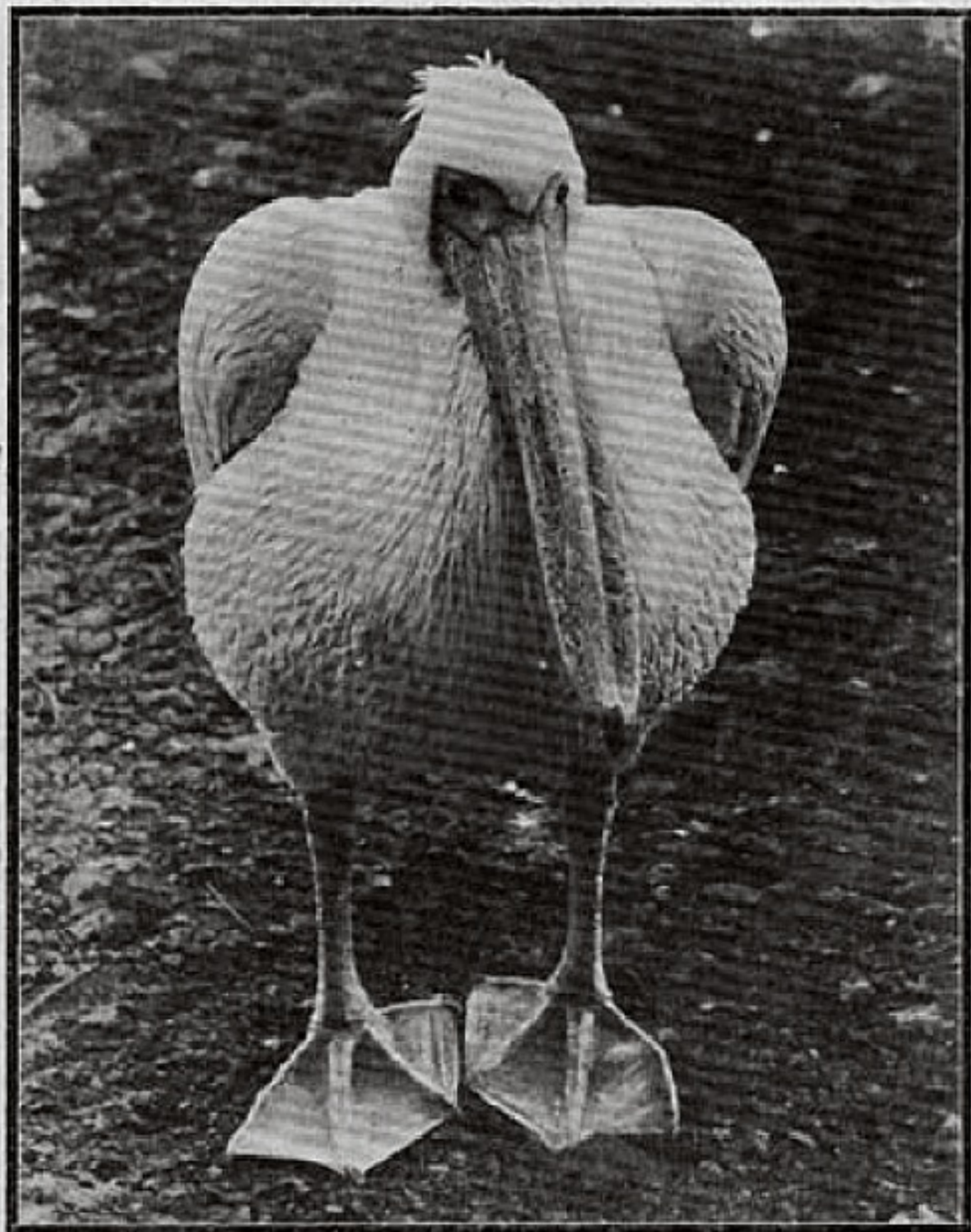
पुरस्कृत
परिचयोक्ति

जैसे चित्र अजन्ता में!

प्रेषक :
राजकुमार श्रीवास्तव-कानपुर

फ़ोटो - परिचयोक्ति - प्रतियोगिता

अप्रैल १९६१ :: पारितोषिक १०)

कृपया परिचयोक्तियाँ कार्ड पर ही भेजें।

ऊपर के फ़ोटो के लिए उपयुक्त परिचयोक्तियाँ चाहिए। परिचयोक्तियाँ दो तीन शब्द की हों और परस्पर संबन्धित हों। परिचयोक्तियाँ पूरे नाम और पते के साथ कार्ड पर ही लिख कर निम्नलिखित पते पर तारीख ७ फरवरी १९६१ के अन्दर भेजनी चाहिए।

फ़ोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता
चन्दामामा प्रकाशन,
वडपलनी, मद्रास-२६

फ़रवरी – प्रतियोगिता – फल

फ़रवरी के फ़ोटो के लिए निम्नलिखित परिचयोक्तियाँ चुनी गई हैं। इनके प्रेषक को १० रुपये का पुरस्कार मिलेगा।

पहिला फ़ोटो: **बैठे हो किस चिन्ता में?**

दूसरा फ़ोटो: **[illegible] [illegible] [illegible] में!**

प्रेषक: राजकुमार श्रीवास्तव,
C/o जगदम्बा प्रसाद श्रीवास्तव, १२८डी/५७, किदवई नगर-कानपुर